वैदिक ग्रंथ-माला

भाग-२

लेखक

डा० रामकृष्ण आर्य

वैदिक ग्रंथ-माला

भाग - २

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता
अखिल भारतीय स०प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति
बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)
चिकित्सा अधिकारी
अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जिला- भदोही, उ०प्र०

दयानन्दाब्द १७१
सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६
कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी
नवम्बर सन् १९९५ ई०

प्रथम संस्करण : ५००
मूल्य : १६ रुपये

वैदिक ग्रंथ-माला के सम्बन्ध में

आवश्यक बातें

१. इन पुस्तकों के प्रकाशन का उद्देश्य जन-जन तक ज्ञान का प्रकाश पहुँचाना है।

२. ये पुस्तकें छोटी हैं लेकिन ठोस हैं। इनमें इतनी सामग्री है कि कहना पड़ता है—

एक गोता लगाओ। अनेक मोती पाओ॥

३. ये पुस्तकें बड़ी खोजपूर्ण हैं। इनमें ऐसी-ऐसी सामग्री है जो २० वर्षों तक सतत खोज करने पर मिली है।

४. इन पुस्तकों में ऐसी-ऐसी शंकाओं का समाधान किया गया है जिनके विषय में बड़े-बड़े विद्वान मौन रहते हैं।

५. ये पुस्तकें विद्यार्थियों के लिए अति उपयोगी हैं जो उन्हें अन्धविश्वास एवं पाखण्ड से दूर हटाकर सही दिशा की ओर अग्रसर करती हैं।

६. ये पुस्तकें नये वर्ष के उपलक्ष में, होली आदि पर्व पर, विवाह आदि उत्सव पर या किसी भी शुभ अवसर पर अपने मित्रों एवम् सुहृज्जनों को भेंट करें।

७. ये पुस्तकें स्त्री, पुरुष, बच्चे एवं विद्वान सबके लिए उपयोगी हैं। यदि आप इन पुस्तकों से कुछ भी लाभ उठा सकें तो लेखक अपने को धन्य समझेगा।

८. आशा है कि आप अपना सहयोग देकर लेखक का उत्साहवर्द्धन करेंगे।

साँच को आँच नहीं, झूठ का मुँह काला।
आँख खुल जाये, पढ़ो वैदिक ग्रंथ-माला॥
छोटी-छोटी पुस्तकें ये, लेकिन बड़ा दम है।
सारे धूर्त्तों के लिए, समझो ये बम हैं॥
क्रान्तिकारी पुस्तकें ये, एक से एक बढ़कर।
आनन्द मिलेगा, जब देखोगे पढ़कर॥

लेखक

डा. रामकृष्ण आर्य

वैदिक ग्रंथों की सूची

- दयानन्द की देन
- दयानन्द दर्शन
- क्रान्ति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द
- सत्य का योद्धा स्वामी दयानन्द
- सत्यार्थ प्रकाश दर्पण
- ढोल की पोल
- गीता सत्य की कसौटी पर
- रामऔरकृष्ण

महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त डा० श्रीराम आर्य
का

❀ अभिनन्दन ❀

जिसने जीवन के समस्त सुखों को लात मारकर सद्धर्म
प्रचार में ८३ पुस्तकें लिखा ।

जिसने सदैव निर्भय होकर विधर्मियों के प्रश्नों का
मुँहतोड़ उत्तर दिया ।

जिसने अमर शहीद पं० लेखराम की अन्तिम इच्छा
"आर्य समाज से लेख का काम बन्द न हो"
को साकार किया ।

जिसने 'न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः' की
उक्ति को चरितार्थ किया ।

ऐसे देशभक्त, समाज सुधारक, मूर्धन्य विद्वान् स्वनामधन्य
डा० श्रीराम आर्य के अभिनन्दन में
यह ग्रंथ-माला सहर्ष प्रकाशित किया जाता है ।

— डा० रामकृष्ण आर्य

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प १७

स्वामी दयानन्द की देन
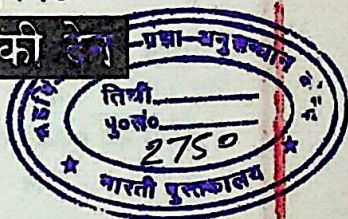
★

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१
सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६
कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी   प्रथम संस्करण : १०००
नवम्बर सन् १९९५ ई०   मूल्य : ३ रुपये

दो शब्द

गिने जाएं मुमकिन सहारा के जर्रे,
समुन्दर के कत्तरे फलक के सितारे ।
मगर नहीं मुमकिन ऐ स्वामी दयानंद,
गिने जाए अहसां मुझसे तुम्हारे ।।

स्वामी दयानंद अद्वितीय महापुरुष थे। उन्होंने भारत ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व का कल्याण किया है। उनका मानव मात्र पर अगणित उपकार हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ में हमने स्वामी जी की चार देन के वारे में प्रकाश डाला है—

(i) धार्मिक देन

(ii) सामाजिक देन

(iii) शैक्षणिक देन

(iv) ऐतिहासिक देन

हमारा रोम-रोम स्वामी जी का ऋणी है। कवि ने ठीक ही कहा है-

सौ वार जनम लेंगे, सौ वार फना होंगे ।
अहसान दयानंद के, फिर भी न अदा होंगे ।।

नव संवत्सरोत्सव
चैत्र शुक्ल १ संवत् २०४६ वि०

डा० रामकृष्ण आर्य

१ धार्मिक देन

सृष्टि की आदि से महाभारत पर्यन्त न केवल भारत अपितु सारे संसार में एक ही धर्म था 'वैदिक धर्म'। महाभारत के वाद मत-पंथ-सम्प्रदाय धूर्तों ने चला दिये, जिससे लोग धर्म से दूर भटक गये और मत-मतान्तरों को ही धर्म मानने लगे।

महर्षि दयानंद ने लिखा है-

"५ हजार वर्षों से पूर्व वेद मत से भिन्न दूसरा कोई भी मत नहीं था। इनकी अप्रवृत्ति से अविद्या अंधकार के भूगोल में विस्तृत होने से मानवों की बुद्धि भ्रमयुक्त होकर जिसके मन में जैसा आया वैसा मत चलाया।"

-सत्यार्थ प्रकाश, अनुभूमिका १

आगे ऋषिवर लिखते हैं-

"इन्हीं मतवालों ने अपने-अपने मतों का प्रचार कर मनुष्यों को फँसाके परस्पर शत्रु बना दिये हैं।"

-स. प्र. स्वमन्तव्य.

गो. तुलसी दास के शब्दों में-

कलिमल ग्रसेउ धर्म, सब लुप्त भये सद्ग्रंथ।
दंभिन्ह निज मत कल्पिकर, प्रगट किये बहु पंथ।।
श्रुति सम्मत हरिभक्ति पथ, संयुत ज्ञान विवेक।
तेहि न चलहिं नर मोह वश, कल्पहिं पंथ अनेक।।

-रामचरित मानस, उत्तरकांड

वेद से विमुख मतवाला होके लोग ईश्वर को भूल गये और उसके स्थान पर नाना देवी-देवताओं की मूर्तियां बनाकर पूजने लगे। पत्थर पूजते-पूजते उनकी अकल भी पत्थर हो गई, जिससे वे शिव लिंग (लोढ़ा नाथ) की पूजा करने लगे। इतना ही नहीं पापी लोग मूर्ति पर निरपराध पशुओं का बध भी करने लगे पूजा के नाम पर और मांस को प्रसाद मानकर राक्षस लोग खाने लगे। आश्चर्य यह है कि इन पापों को लोग धर्म मानने लगे। कवि कहता है-

धर्म को जानो, धर्म को मानो, धर्म प्रेमी भाई रे।
वंद करो ये पाप कर्म, क्यों खून की नदी वहाई रे॥

महर्षि दयानंद ने धर्म की व्याख्या करते हुए बताया-

"जो पक्षपात रहित, न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है उसी का नाम धर्म है।"—स. प्र. समु. ३

"जो पक्षपात रहित, न्यायाचरण, सत्यभाषणादि युक्त, ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको धर्म मानता हूँ।"—स. प्र. स्वमन्तव्य.

मनु महाराज ने लिखा है-

श्रुति स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षात् धर्मस्य लक्षणम्॥ मनु. २/१२

अर्थात् वेद, स्मृति, सत्पुरुषों का आचरण तथा आत्मा जिसको चाहता है- ये धर्म के ४ लक्षण हैं।*

महर्षि पतंजलि ने कहा है-

तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रहा यमाः॥
शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः॥
—यो. द. १/२/३१,३२

अर्थात् वैर त्याग, सत्य मानना बोलना और कहना, मन वचन कर्म से चोरी न करना, उपस्थेन्द्रिय का संयम, लोलुपता रहित होना -ये ५ यम हैं।

(शौच) स्नानादि से पवित्रता, (सन्तोष) जो पुरुषार्थ से प्राप्त हो उसी से सन्तुष्ट रहना, (तप) कष्ट सहकर भी धर्मयुक्त कर्मों का अनुष्ठान, (स्वाध्याय) पढ़ना-पढ़ाना, (ईश्वर प्रणिधान) ईश्वर की भक्ति —ये ५ नियम हैं।

महर्षि कणाद के शब्दों में-

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः। वै. द.१/२

अर्थात् जिससे लोक और परलोक दोनों की उन्नति हो वह धर्म है।

*मनु महाराज ने मनु० ६।९२ में धर्म के १० लक्षण बताये हैं।

II सामाजिक देन

(क) गुरुडम का विरोध

स्वामी दयानंद मानते हैं कि 'मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद' अर्थात् माता-पिता और गुरु ये तीन जब उत्तम शिक्षक होते हैं तभी मनुष्य ज्ञानी बनता है। स्वामी जी यह भी मानते हैं कि 'स एष पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात्।' अर्थात् आदि सृष्टि में परमात्मा ही सबका गुरु होता है।

गुरु कहते हैं-

यानि यानि सुचरितानि तानि त्वयो उपास्यानि नो इतराणि।

अर्थात् हमारे सदाचार का अनुकरण करो दुराचार का नहीं।

परन्तु गुरुडम कहता है-

गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।।
उचित कि अनुचित किए विचारू। धरम जाइ सिर पातक भारू।।

—तुलसी रामायण (अयोध्या कांड)

अर्थात् माता, पिता, गुरु, स्वामी और मित्र की बात सुनके प्रसन्न मन से उसे अच्छा समझकर करना (मानना) चाहिए। उचित-अनुचित का विचार करने से धर्म चला जाता है और सिर पर पाप का भार बढ़ जाता है।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरु साक्षात् परं ब्रह्म, तस्मै श्री गुरुवे नमः ।। गुरु गीता

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश और साक्षात् परम ब्रह्म परमेश्वर हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ गुरु विवेक को जागृत करते हैं, वहाँ गुरुडम बुद्धि पर ताला लगा देता है, देश में जितने भी मत-मतान्तर बरसाती मेढ़क की तरह दीख रहे हैं, सभी गुरुडम पर आधारित हैं। पौराणिक मत, इस्लाम मत, ईसाई मत, बौद्ध मत, जैन मत, कबीर पंथ, हंसा मत, ब्रह्मा कुमारी मत, आनंद मार्ग, जयगुरुदेव, साईंबाबा, निरंकारी मत, गायत्री परिवार आदि सभी गुरु के पीछे आंख मूद कर चलना सिखाते हैं।

महर्षि दयानंद गुरुडम के घोर विरोधी थे। **'शत्रोरपि गुणो वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि'** उनका सिद्धान्त था।

महर्षि कहते हैं—

"ब्रह्मा, विष्णु, महेश तो परमेश्वर के नाम हैं। उसके तुल्य गुरु कभी नहीं हो सकता।* जो विद्यादि सद्गुणों में गुरुत्व नहीं है, झूठ-मूठ कंठी-तिलक वेद विरुद्ध मंत्रोच्चारण करने वाले हैं, वे गुरु ही नहीं किन्तु गड़रिये हैं। जैसे गड़रिये अपनी भेड़ बकरियों से दूध आदि प्रयोजन सिद्ध करते हैं, वैसे ही ये चेले चेलियों से अपना उल्लू सीधा करते हैं।

गुरु लोभी चेला लालची, दोनों खेलें दाव ।
भव सागर में डूबते, बैठ पत्थर की नाव ।।

गुरु समझे कि चेले कुछ न कुछ देंगे और चेला समझे कि गुरु पाप छुड़ा देंगे। इस प्रकार गुरु-चेला दोनों भवसागर में डूबते हैं, जैसे पत्थर की नौका में बैठने वाले समुद्र में डूब मरते हैं।" —स. प्र. समु. ११

(ख) निकम्मे साधु

देश में निकम्मे साधुओं की कमी नहीं है। ये हर जगह मांगते-खाते दिखाई देते हैं। देश में कितने विचारे ऐसे हैं जिन्हें दिन भर पसीना बहाने पर (कड़ी मेहनत करने पर) भी रूखी-सूखी रोटी भी नसीब नहीं होती. लेकिन इन निकम्मे साधुओं को बढ़िया भोजन लिट्टी-दाल और ऊपर से घी भी मिल जाता है भोले भक्तों से। ऐसे साधुओं के लिए ही कहा है-

आन का मैदा आन का घी ।
भोग लगावैं बाबा जी ।।

ज्येष्ठ मास की कड़ी धूप में खेतों में काम करने वालों को ये उपदेश देते हैं-

रूखा-सूखा खाइके, ठंडा पानी पीव ।
देख पराई चूपड़ी, मत ललचावे जीव ।।

ये एक पैसे का काम नहीं करते और अजगर की तरह दूसरों की गाढ़ी कमाई पर गुलछर्रे उड़ाते हैं। कितने साधू तो गांजा भी पीते हैं और कहते हैं-

अगड़धत्ता। फूँक दे बम्बई और कलकत्ता।।
छान-छान। नहीं निकल जायेगी जान।।

* स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रः। कैवल्य उपनिषद् (स. प्र. समु.१)

कुछ साधू ऐसे भी होते हैं जो दुनियां का सब पाप-चोरी, डकैती, हत्या व्यभिचार करते हैं।

स्वामी दयानंद के विचार से ये साधु नहीं असाधु हैं। इन्हें साधु कहना ठीक नहीं। ये कामचोर हैं। ये देश पर भार हैं। इनका जीवन मृग के समान है। जैसे मृग किसानों के खेत चरके जंगल में घुस जाते हैं, वैसे ही ये निकम्मे साधु गृहस्थों का अन्न खाकर उनका कुछ उपकार नहीं करते।

साधु वे हैं जो परोपकार करते हैं क्योंकि 'परोपकाराय सतां विभूतयः।' ब्राह्मण सबका गुरु होता है, पर संन्यासी ब्राह्मणों का भी गुरु होता है। वह परिव्राट होता है।

(ग) जातिवाद उन्मूलन

यह देश के पतन का एक कारण है।इसके कारण समाज सैकड़ों टुकड़ों में बँटा हुआ है। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई की बात तो दूर हिन्दुओं में ही अनेकानेक जातियां हैं।

कवि ने ठीक ही लिखा है-

ज्यों केले के पात, पात में पात ।
ज्यों कवियों की बात, बात में बात ।
ज्यों गधे की लात, लात में लात ।
त्यों हिन्दू की जात, जात में जात ।।

जातिवाद देश का एक कलंक है। राष्ट्र-कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है-

ऊँच-नीच का भेद न माने, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है ।
दया-धर्म जिसमें हो समझो, वही पूज्य प्राणी है ।।
तेजस्वी सम्मान खोजते नहीं गोत्र बतलाके ।
पाते हैं जग में प्रशस्ति, अपना करतब दिखलाके ।।
ऊपर सिर पर कनक छत्र, भीतर काले के काले ।
सरमाते हैं नहीं जगत् में, जाति पूछने वाले ।।
मूल जानना बड़ा कठिन है, नदियों का, वीरों का ।
धनुष छोड़कर और गोत्र, क्या होता रणधीरों का ।।

पाते हैं सम्मान तपोबल से, भूतल पर शूर ।
जाति-जाति का शोर मचाते, केवल कायर क्रूर ।।

-रश्मिरथी

देखिये! प्राचीन काल में जो गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर वर्ण व्यवस्था थी, उसे लोग जन्म के आधार पर मानने लगे (बपौती बना लिये)। महर्षि दयानंद ने गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर वर्ण व्यवस्था का पुनर्गठन किया। महर्षि ने बताया कि ४ वर्ण हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। वर्ण का अर्थ है चयन। और वर्णव्यवस्था व्यक्ति का राष्ट्रीयकरण है।

राष्ट्र के ३ शत्रु हैं-- अज्ञान, अन्याय और अभाव। इन तीनों शत्रुओं से निपटने के लिए ही वर्णव्यवस्था का विधान है।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ।। यजु. ३१।११

अर्थात् राष्ट्र शरीर का सिर ब्राह्मण, भुजा क्षत्रिय, पेट वैश्य और पैर शूद्र है। ब्राह्मण ज्ञान द्वारा अज्ञान को मिटाकर, क्षत्रिय बल द्वारा अन्याय का दमन कर, वैश्य धन द्वारा अभाव को समाप्त कर और शूद्र सेवा द्वारा तीनों वर्णों का सहायक बनकर राष्ट्र की रक्षा और उन्नति करता है।

वर्ण व्यवस्था में सबको उन्नति का समान अवसर है। ब्राह्मण कर्महीन होने पर शूद्र हो सकता है और शूद्र उन्नति करके ब्राह्मण बन सकता है।

महर्षि मनुस्मृति का प्रमाण देते हुए लिखते हैं-

शूद्रो ब्राह्मणतामेति, ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु, विद्याद्वैश्यात्तथैव च ।। मनु.(१०।६५)

जो शूद्रकुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय; वैसे ही जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यकुल में उत्पन्न हुआ हो और उसके गुण-कर्म-स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाय।

-स. प्र. समु. ४

(घ) अस्पृष्यता निवारण

ब्राह्मणों ने क्षत्रियों और वैश्यों को मिलाकर शूद्रों को अछूत घोषित कर दिया। इतना ही नहीं उनके ऊपर तरह-तरह के जुर्म ढाने लगे। शूद्रों के

पढ़ने लिखने पर भी प्रतिबन्ध था। शूद्रों के लिए दंड का विधान था-

उच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीर भेद।

अर्थात् पढ़े तो जिह्वा काट लो और पढ़-लिख ले तो मार डालो।

स्वामी दयानंद ने कहा कि शूद्र भी समाज का आवश्यक और अभिन्न अंग है। जैसे पैर के बिना शरीर बेकार है, वैसे ही शूद्र के बिना समाज जीवित नहीं रह सकता। शूद्र को अछूत कहना मूर्खता है। हाँ, सांप-विच्छू और शेर-चीता को अछूत कहा जा सकता है जिन्हें छूने पर खतरा हो सकता है। बिजली को अछूत कह सकते हैं जिसे छूने पर जान जा सकता है।

छुआछूत की संकीर्णता के कारण ही हमारे लाखों भाई हमसे जुदा हो गये। स्वामी दयानंद को कोटिशः धन्यवाद, जिन्होंने शुद्धि का चक्र चलाकर बिछुड़े भाइयों को हमसे पुनः मिलाया। स्वामी दयानंद से पूर्व हिन्दू जाति की दशा आटे के दीपक के समान थी जिसे बाहर रख दें तो कौआ उठा ले जाय और अन्दर रख दें तो चूहा खींच ले जाय। हिन्दुओं की चोटी धड़ाधड़ कट रही थी। हिन्दू लोग ईसा-मूसा की भेड़ों में मिलते जा रहे थे।

स्वामी जी ने कहा-

"खबरदार, मेरे खजाने को लूटने वालों! व्याज समेत वापस लूँगा।"

स्वामी जी ने जहाँ बिछुड़े भाइयों को पुनः मिलाया वहाँ लाखों मुसलमानों और ईसाइयों को भी आर्य बनाया। इस मार्ग पर चलके स्वामी जी द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने करोड़ों विधर्मियों को वैदिक धर्म की दीक्षा दिया। इतना ही नहीं पं. लेखराम और स्वामी श्रद्धानंद ने अपना बलिदान देकर शुद्धि चक्र को और गति प्रदान किया। इसी का फल है कि आज बड़े--बड़े मौलवी और पादरी आर्य समाज में आ गये हैं।* आर्यसमाज ने हिन्दू जाति की बड़ी रक्षा की।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है-

"आर्य समाज के जन्म से पूर्व हिन्दू कोरा फुसफुसिया जीव था। उसका

* डा. अमरेश आर्य (पूर्वनाम- शेख अमीर अली)
डा. आनन्द सुमन (पूर्वनाम- डा. रफत अखलाक)
पं. महेन्द्रपाल आर्य (पूर्व इमाम मेरठ, उ. प्र.)
पं. जयप्रकाश आर्य (पूर्व इमाम बेतिया, विहार)

मेरुदंड की हड्डी थी ही नहीं। कोई चाहे उसके महापुरुषों पर कीचड़ उछाले या उसके धर्म की निन्दा करें, वह खीस निपोर कर रह जाता था। किन्तु आर्य समाज के उदय के पश्चात् उदासीनता की यह मनोवृत्ति सदा-सदा के लिए विदा हो गई।"

-संस्कृत के चार अध्याय

(ङ) नारी उद्धार

वह युग अंधकार का युग था, जब समाज के शत्रुओं ने समाज के आधे भाग नारी को पशुवत् जीवन जीने के लिए बाध्य किया था-

औरतों में रूह (आत्मा) होती ही नहीं। —ईसा
बीवियां खेतियां हैं। —मु.सा.
नारी नरकस्य द्वारम्। —शंकराचार्य
नारी की छाई परत, अंधा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी कौन गति,जे नित नारी के संग।। —कबीर
नारी सुभाव सत्य कवि कहई।
अवगुण आठ सदा उर रहई।। —तुलसी

धर्म के ठेकेदार धूर्तों ने नारी को शिक्षा का अधिकार नहीं दिया और कहा- "स्त्री शूद्र नाधीयताम्" अर्थात् स्त्री और शूद्र न पढ़ें। इस प्रकार नारी पुरुषों के पैर की जूती बनकर पग-पग पर प्रताड़ित की जाती रही। नारी अज्ञान अंधकार में दर-दर की ठोकरें खाती रही। नारी को घुट-घुटकर जीवन के दिन काटना पड़ता था। नारी का करुण क्रन्दन ही चारों ओर सुनाई पड़ता था।

परन्तु ईश्वर के यहाँ देर है, अंधेर नहीं। सन् १८२५ में एक ऋषि आया जिसके आदि में दया और अन्त में आनंद था। नारी के दुःख देखकर देव दयानंद का दिल द्रवित हो गया। ऋषि रो उठा-

नारी जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध और आँखों में पानी।।

ऋषि ने धर्म के ठेकेदारों को फटकारते हुए कहा-

नारी निन्दा मत करो, नारी गुण की खान।
नारी से नर उपजे, राम — कृष्ण — हनुमान।।

ऋषि ने नारी उद्धारका बीड़ा उठाया और कहा-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्र नार्यस्तु न पूज्यन्ते, सर्वाः तत्र अफलाः क्रियाः ।।

नारी पूज्या है। नारी मातृशक्ति है। नारी देवी है। नारी गृहलक्ष्मी है। नारी गृहस्वामिनी है। नारी राष्ट्र का सिर है।

माता निर्माता भवति।

अर्थात् नारी राष्ट्र का निर्मात्ता है। क्योंकि बच्चे राष्ट्र के भविष्य हैं और बच्चे का निर्माण माता ही करती है।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।

अर्थात् माता ही बच्चे का प्रथम गुरु है। इतिहास साक्षी है भरत को माता शकुन्तला ने ही शेर जैसा बहादुर बनाया था। शिवाजी को माता जीजाबाई ने ही वीर बनाया था जिसके सामने औरंगजेब जैसे क्रूर एवं निष्ठुर बादशाह को भी घुटने टेकना पड़ा।

वैदिककाल में नारी का स्थान अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। अपाला, घोषा आदि नारियां शास्त्रार्थ कर्त्री थीं। लीलावती बीजगणित का आविष्कारक वैज्ञानिक थी। कैकेयी वीरांगना थी। मन्दोदरी नीति विशारदा थी।

आज जिस समानता एवं स्वंत्रता के वातावरण में नारी साँस ले रही है और समाज में नारी जागरण दिखाई दे रहा है उसका श्रेय ऋषि दयानंद को है।

लेकिन दुःख इस बात का है कि नारी पर अत्याचार करने वाले देश के दुश्मन आज भी मौजूद हैं। दिवराला का सती कांड इसका ज्वलंत प्रमाण है। घटना इस प्रकार है।

१८ वर्षीया नवयुवती रूपकुंवर की शादी मलखा सिंह से हुई थी। दैवयोग से कुछ महीने बाद उसके पति की मृत्यु हो गयी। सती प्रथा के समर्थकों ने रूपकुंवर को भी उसकी लाश के साथ जलाना चाहा। जब रूपकुंवर को यह पता चला तो वह अपनी जान बचाने के लिए भूसा के एक गोदाम में छिप गई। लेकिन सती प्रथा के भूखे भेड़िये उसे बलात् खींच लाये और चिता में झोंककर जीवित जला दिया। इस दुःखद एवं विभत्स घटना से देश शोक सागर में डूब गया। परन्तु हिन्दू धर्म के ठेकेदार धर्मध्वजी स्वामी निरंजन देव तीर्थ (पुरी के शंकराचार्य) ने इस पाप का समर्थन किया और सती प्रथा को वेद सम्मत बताया।इस बात को लेकर आर्य समाज ने उन्हें शास्त्रार्थ की चुनौती

दीं परन्तु वे सामने आने का साहस न कर सके।

देखिये! वेद में सती प्रथा का कहीं नामोनिशान भी नहीं है। वेद कहता है-

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीरांजनेन सर्पिषा संविशन्तु ।

अनश्रवोऽनमीवाः सुरत्नाः, आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे ।।

-ऋग्वेद १०/१८/७

अर्थात् ये पुनर्विवाहिता स्त्रियां घृतांजन से सुशोभित, अश्रुरहित, निरोग और आभूषणों से सुसज्जित होकर नये पति के साथ आदरपूर्वक आगे-आगे अपने नये गृह में प्रवेश करें।

यहाँ 'विधवा' और 'अग्नि' शब्द ही नहीं है। नारीरविधवाः= नारीः+अविधवाः, योनिमग्रे=योनिम्+अग्रे।

नोटः- उपरोक्त मंत्र में अग्रे को अग्ने पढ़कर स्वामी निरंजनदेव ने कहा कि 'स्त्री अग्नि में प्रवेश करे।' लेकिन अग्रे का अग्ने कदापि नहीं हो सकता, क्योंकि वेदमंत्रों में स्वर के चिह्न लगे हुए हैं और ऋषियों ने जटा, माला, शिखा आदि ८ प्रकार के पाठ द्वारा वेदों की सुरक्षा का प्रबन्ध कर दिया है। स्वामी नि. दे. तीर्थ को सफेद झूठ बोलते और वेदों को कलंकित करते लज्जा नहीं आती। इनके गुरु सायण के भाष्य में भी अग्रे शब्द है।

जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य ने धर्म की रक्षा के लिए देश में चारों कोनों पर ४ गद्दियां स्थापित की। परन्तु पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ जिस गद्दी पर बैठे हैं उसी को कलंकित कर रहे हैं। नि. दे. तीर्थ ने सती प्रथा का समर्थन करके धर्म की लुटिया डुबो दिया। जब रक्षक ही भक्षक बन जाये तो देश कैसे बचेगा?

दिल के फफोले जल उठे, सीने के दाग से ।

इस घर को आग लग गई, घर के चिराग से ।।

■■

III शैक्षणिक देन

जिस प्रकार शरीर के विकास के लिए भोजन की आवश्यकता है, उसी प्रकार आत्मा की उन्नति के लिए शिक्षा अनिवार्य है। स्वामी दयानंद एक महान शिक्षाशास्त्री थे। सन्तानों को सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत बनाने के लिए उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय एवं तृतीय समुल्लास लिखा तथा इसके अतिरिक्त व्यवहार भानु एवं वेदांग प्रकाश की रचना की।

अंग्रेजों ने इस देश में अपना शासन चिरस्थाई बनाने के लिए एक चाल चलीं। वे सोचे कि डंडे के बल पर यह कार्य कठिन ही नहीं अपितु असम्भव है। लेकिन बुद्धि के बल पर सम्भव ही नहीं आसान भी है। अतः उन्होंने मैकाले को नई शिक्षा नीति बनाने को नियुक्त किया। उसने सन् १८३५ में नई शिक्षा नीति चलाया।

मैकाले ने कहा– "इस शिक्षा नीति के अनुसार भारतीय शरीर से तो भारतीय ही होंगे, परन्तु मस्तिष्क से अंग्रेज होंगे।"

स्वामी दयानंद ने मैकाले की शिक्षा नीति का पर्दाफास किया और राष्ट्रीय शिक्षा पर बल दिया।

स्वामी जी ने कहा-

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।

अर्थात् जब तीन उत्तम शिक्षक एक माता, दूसरा पिता और तीसरा गुरु होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान् होता है।

जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार होता है उतना किसी से नहीं। जब बालक बोलने लगे तब माता वर्णों का स्थान और प्रयत्न बतावें* जैसे 'प' इसका ओष्ठ स्थान और स्पृष्ट प्रयत्न।

जैसे सन्तान जितेन्द्रिय हो, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि करे वैसा प्रयत्न

* अर्थात् वर्णों का उच्चारण सिखावें। (लेखक)

करते रहें।

जब ५ वर्ष के लड़का या लड़की हों तो देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करावें, अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का भी। उसके पश्चात् किनसे कैसा व्यवहार करना चाहिए इन बातों के मंत्र, श्लोक आदि अर्थ सहित कंठस्थ करावें जिससे सन्तान किसी धूर्त्त के बहकावे में न आवें। और जो विद्या धर्म विरुद्ध भ्रम जाल में गिराने वाले व्यवहार हैं उनका भी उपदेश कर दें, जिससे भूत-प्रेत आदि मिथ्या बातों का विश्वास न हो।

जन्म से ५वें वर्ष तक बालक को माता, ६वें वर्ष से ८वें वर्ष तक पिता शिक्षा करें और ९वें वर्ष के आरम्भ में विद्याध्ययन के लिए गुरुकुल में भेज दें।

उन्हीं के सन्तान विद्वान् सभ्य और सुशिक्षित होते हैं जो पढ़ाने में सन्तानों का लाड़न नहीं करते किन्तु ताड़न ही करते हैं। माता, पिता तथा अध्यापक लोग ईर्ष्या-द्वेष से ताड़न न करें किन्तु ऊपर से भय प्रदान और भीतर से कृपा दृष्टि रक्खें।*

यानि अस्माकं सुचरितानि तानि त्वयो उपास्यानि नो इतराणि।

तैत्तिरीय उपनिषद्(१।११)

अर्थात् माता-पिता-आचार्य अपने सन्तानों और शिष्यों को सदा सत्य उपदेश करें और यह भी कहें कि 'जो हमारे धर्मयुक्त कर्म हों उन्हीं का ग्रहण करो और जो दुष्कर्म हों उनका त्याग करो।'

माता शत्रुः पिता वैरी, येन बालो न पाठितः।
न शोभन्ते सभामध्ये, हंसमध्ये बको यथा।। चाणक्यनीतिः

अर्थात् वे माता-पिता अपने सन्तानों के दुश्मन हैं जिन्होंने उनको नहीं पढ़ाया। वे विद्वानों की सभा में उसी प्रकार तिरस्कृत होते हैं जैसे हंसों के बीच में बगुला।

---

* जैसे कुंभार घड़ा बनाते समय बाहर से चोट करता है परन्तु भीतर से हाथ लगाये रहता है। -लेखक

माता पिता का परम धर्म है कि वे अपने सन्तानों को तन-मन-धन से पढ़ावे।"

-सत्यार्थ प्रकाश, समु. २

स्वामी जी आगे लिखते हैं--

विद्याविलासमनसो धृतशील शिक्षाः, सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता, ये धन्या नरा विहित कर्म परोपकाराः।।

अर्थात् जिन पुरुषों का मन विद्या के विलास में तत्पर रहता, सुन्दर शील स्वभाव युक्त, सत्यभाषणादि नियम पालन युक्त और जो अभिमान अपवित्रता से रहित, अन्य मलीनता के नाशक, सत्योपदेश, विद्यादान से संसारी जनों के दुःखों को दूर करने से सुभूषित, वेदविहित कार्यों से परोपकार करने में लगे रहते हैं, वे नर-नारी धन्य हैं।

८ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की तथा लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवें।

विद्या पढ़ने का स्थान एकान्त देश में होना चाहिए और लड़के लड़कियों की पाठशाला एक दूसरे से २ कोस दूर होना चाहिए। सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जायें, चाहे वह राजा की सन्तान हो, चाहे दरिद्र की।

राजनियम और जाति नियम होना चाहिए कि ५वें अथवा ८वें वर्ष से आगे अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज दें। जो न भेजे वह दंडनीय हो।

माता-पिता-गुरु अपने लड़कों-लड़कियों को अर्थ सहित गायत्री मंत्र *का

---

*ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। यजु. ३६।३

अर्थ- हे परमात्मन्! आप प्राणों के प्राण हैं। आप दुःखनाशक और आनन्ददाता हैं। आप संसार के मालिक हैं। आप ही उपासना के योग्य हैं। हम आपके दिव्य गुणों को धारण करते हैं। आप हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करें।

उपदेश कर दें।

गायत्री मंत्र का उपदेश करके सन्ध्योपासन की क्रिया सिखलावें।

जब तक विद्या पूरी ग्रहण न कर लें तब तक ब्रह्मचर्य रक्खें।

जो-जो पढ़ना-पढ़ाना हों* वह अच्छी प्रकार परीक्षा करके होना चाहिए।

परीक्षा पांच प्रकार से होती है-

(१) जो वेदानुकूल हो वह सत्य और जो वेद विरुद्ध हो असत्य है।

(२) जो सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वह सत्य और जो विरुद्ध हो असत्य है।

(३) जो आप्त वचन हो वह सत्य और जो उसके विरुद्ध हो असत्य है।

(४) जो आत्मानुकूल है वह सत्य और जो आत्मा के विरुद्ध हो असत्य है।

(५) ८ प्रमाण-प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव।

सर्वेषामेव दानानां, ब्रह्मदानं विशिष्यते। मनु. (४।२२३)

अर्थात् संसार में जितने भी दान हैं उनमें विद्यादान सर्वश्रेष्ठ है। इसलिए तन-मन-धन से विद्या की वृद्धि किया करें।

-सत्यार्थप्रकाश, समु०३

* स्वामी जी ने पाठ्य-अपाठ्य ग्रंथों की सूची सत्यार्थ प्रकाश में दिया है।

IV ऐतिहासिक देन

इतिहास = इति+ह+आस, अर्थात् ऐसा ही हुआ था। इस प्रकार अतीत की सत्य घटनाओं को इतिहास कहते हैं। इतिहास का बड़ा महत्व है। इतिहास प्रेरणा का स्रोत होता है। इससे हमें अपने अतीत से सबक लेने तथा महान् बनने की शिक्षा मिलती है।

यूरोप के एक मनीषी ने लिखा है-

"If you wish to destroy a nation, destroy its history, the nation will be abolised of its own accord."

अर्थात् यदि किसी राष्ट्र को नष्ट करना है तो उसके इतिहास को नष्ट कर दो, उस राष्ट्र का नाश स्वयं ही हो जायेगा।

उर्दू के किसी शायर ने भी कहा है-

कौम की तारीख से जो बेखबर हो जायेगा।
रफता रफता आदमीयत खोके खर हो जायेगा।।

तात्पर्य यह है कि जो अपने इतिहास को भूल जाता है, वह नष्ट हो जाता है, उसका नाम-लेवा भी नहीं रह जाता।

इसलिए आइये हम इतिहास के पन्ने पलटें और देखें--

हम क्या थे? क्या हो गये? और क्या होंगे अभी ?
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी ।।

इतिहास से ज्ञात होता है कि हम अपना नाम भी भूल गये थे। यह स्वामी दयानंद की कृपा है कि उन्होंने बताया-

(१) हमारा नाम आर्य है।

(२) आर्य इस देश (भारत) के मूल निवासी हैं।

(३) आर्य विद्या-बल-वैभव में सबसे आगे थे।

(४) आर्यों का संसार में चक्रवर्ती सार्वभौम राज्य रहा।

इन बातों का विवरण अगले पृष्ठों में पढ़ें।

(१) आर्य हमारा नारा है

देखिये! हमारा नाम आर्य है तथा इस देश का सबसे पुराना नाम आर्यावर्त्त है। आर्यावर्त = आर्य+आवर्त, अर्थात् आर्यों का स्थान। आर्यावर्त नाम इसलिए है कि आदि सृष्टि में तृविष्टप (तिब्बत) से आकर आर्य लोग सर्वप्रथम यहीं बसे। आर्यों से पहले यहाँ कोई नहीं रहता था। बाद में जनसंख्या बढ़ने पर विमान आदि से भ्रमण करते हुए दूसरे देशों में जाकर बस गये। महाभारत काल तक वे भी अपने को आर्य कहते थे। उनका यहाँ से विवाह संबंध भी होता था। गांधारी गांधार (अफगानिस्तान), माद्री ईरान तथा उलूपी पाताल देश (अमेरिका) की राजकन्या थी।

'आर्य' शब्द सारगर्भित एवं गौरवपूर्ण है। आर्य का अर्थ है श्रेष्ठ। दूसरे शब्दों में कर्म-गुण-स्वभाव में उत्तम पुरुष को आर्य कहते हैं।

हिन्दू नाम मुसलमानों की देन है। जब मुसलमान इस देश को गुलाम बना लिये तो यहाँ के लोगों को हीन भावना से देखने लगे और हिन्दू कहकर पुकारने लगे। 'हिन्दू' फारसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है काफिर, चोर, लूटेरा आदि। अतः हिन्दू शब्द गाली है। परन्तु दुःख की बात है कि हमने गाली को गले का हार समझ लिया, और जैसे बन्दरी अपने बच्चे को मर जाने पर भी गले से चिपकाये रहती है, उसी प्रकार हम लोग भी 'हिन्दू' शब्द को चिपकाये हुए हैं।

स्वामी दयानंद ने 'हिन्दू' शब्द को कदापि स्वीकार नहीं किया। पूना में प्रवचन करते समय स्वामी जी के मुख से हिन्दू शब्द निकल गया तो वे तुरन्त पश्चाताप करते हुए बोले- "प्राण-प्रतिष्ठा के मंत्र कहाँ से निकले, इसका विचार हम हिन्दुओं को, नहीं मैं भूला, हम आर्यों को करना चाहिए।"

-उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन) चौथा उपदेश

कुछ विद्वान 'हिन्दू' को 'सिन्धु' का अपभ्रंश मानते हैं और 'स' का 'ह' उच्चारण की दलील देते हैं। लेकिन यह उनकी भूल है। क्योंकि यदि स का उच्चारण ह होता और सिन्धु के इस पार के लोगों का नाम हिन्दू होता तो सिन्धु नदी का नाम भी हिन्दू नदी होता।

(२) आर्य भारत के मूल निवासी हैं

आर्य भारत में बाहर से आये, यह भ्रम है। यह भ्रम कब-क्यों-कैसे फैला? यह भ्रम अंग्रेजों के शासनकाल में अंग्रेजी शासन को चिरस्थाई बनाने के लिए फूट डालो और राज्य करो (Divide & Rule) की नीति से फैला।

इस नीति के अनुसार अंग्रेजों ने इस देश के कुछ लोगों को मूल निवासी और कुछ लोगों को बाहर से आया हुआ बताया। उन्होंने कहा कि इस देश के मूल निवासी आर्य (कोल, भील, द्रविड़) हैं। कालान्तर में आर्यों ने ईरान आदि से आकर अनार्यों को हराकर अपना अधिकार कर लिया।

इस मिथ्या मान्यता का प्रचार करने के लिए अंग्रेजों ने एक षड्यंत्र रचा और बनारस तथा लाहौर को केन्द्र बनाया। बनारस में टी. एच. ग्रिफिथ को बनारस संस्कृत कालेज का प्रिंसिपल और लाहौर में ए. सी. बुलनर को लाहौर ओरियन्टल कालेज का प्रिंसिपल नियुक्त किया।

इस षड्यंत्र का शिकार अनेकों भारतीय विद्वान भी हो गये और वही राग अलापने लगे जो अंग्रेज चाहते थे। लोकमान्य तिलक ने आर्यों को विदेशी बताते हुए कहा- "कोई १० हजार वर्ष पूर्व उ. ध्रुव में बर्फ का तूफान आया, जिससे आर्य लोग वहाँ से भागे और यूरोप, मध्य एशिया, ईरान और भारत में आकर बस गये।"

आर्य बाहर से आये इस भ्रम के निवारण में युक्ति एवं प्रमाण-

(१) सर्वप्रथम महर्षि दयानंद ने इस भ्रान्त धारणा के विरुद्ध आवाज बुलन्द की। महर्षि ने डंके की चोट घोषणा करते हुए कहा- "किसी भी संस्कृत ग्रंथ में या इतिहास में यह नहीं लिखा कि आर्य लोग ईरान से आये और यहाँ के जंगलियों से लड़कर जय पाकर इस देश के राजा हुए, पुनः विदेशियों का लेख माननीय कैसे हो सकता है?" —स. प्र. समु. ११

(२) संसार में कौन ऐसी जाति है जिसने अपनी जयगाथा न लिखी हो? यदि आर्यों ने द्रविड़ों पर विजय प्राप्त किया होता तो उसका उल्लेख अवश्य किये होते। जैसे- आर्यों ने राम की विजय का रामायण में और पांडवों की विजय का महाभारत में उल्लेख किया है।

(३) रामायण और महाभारत आर्यों का इतिहास है। महाभारत द्वापर के अन्त में हुआ था। इस समय कलि संवत् ५०६२ है जबकि सिन्धु सभ्यता २७५० वर्ष ई. पू. (४७४२ वर्ष हुए) माना जाता है। अतः आर्यसभ्यता ५०६२-४७४२ = ३५० वर्ष सिन्धु सभ्यता से प्राचीन है।

(४) तिलक महोदय कहते हैं कि आर्य उ. ध्रुव से ईरान और ईरान से भारत आये। परन्तु ईरान के स्कूलों में यह पढ़ाया जाता है कि आर्य भारत से जाकर ईरान में बस गये।

(५) लोकमान्य तिलक की बात को लेकर बंगाल के विद्वान् श्री उमेश चन्द्र विद्यारत्न उनके घर पूना गये। तिलक महोदय ने साफ कह दिया-

"आमी मूल वेद अध्ययन कारि नाई। आमी साहिब दिगेर अनुवाद पाठ करिया छि।"-विद्यारत्न जी द्वारा लिखित मानवेर आदि जन्म भूमि, पृ. १२४

अर्थात् हमने मूल वेद को नहीं पढ़ा है बल्कि साहिबों (पाश्चात्य विद्वानों) का किया हुआ अनुवाद पढ़ा है।

(६) पुरातत्व का प्रमाण (Archeological Proof) - सिन्धुघाटी की सभ्यता का राग अलापा जाता है और कहा जाता है कि सिन्धु सभ्यता २७५० वर्ष ई. पू. है और आर्य सभ्यता से प्राचीन है। परन्तु यह धारणा गलत है। क्योंकि मोहन जोदड़ो की खुदाई में जो सामग्री मिली हैं उनमें एक मुद्रा (Seal) ऐसा है जिस पर एक वृक्ष तथा उस पर बैठे दो पक्षी (एक फल खाता हुआ और दूसरा उसे देखता हुआ चित्रांकित है जिसका आधार वेद का निम्न मंत्र है-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति।।

-ऋग्वेद १/१६४/२०

भाव यह है कि ३ अनादि सत्ता हैं- ईश्वर, जीव और प्रकृति। वृक्ष

प्रकृति का प्रतीक है, फल खाता हुआ पक्षी जीव का प्रतीक है और फल न खाता हुआ पक्षी ईश्वर का प्रतीक है।

(७) विश्वविख्यात पुरातत्ववेता टी० बरो (T. Burrow)ने लिखा है-

"The Aryan invasion of India is no written document and it can not yet be traced archeologically."

-The Cultural History of India,

अर्थात् आर्यों के भारत पर आक्रमण की मान्यता का न कोई प्रमाण है और न पुरातत्व की सहायता से सिद्ध किया जा सकता है।

(८) कुछ वर्ष हुए यूनेस्को (UNESCO) के तत्त्वावधान में होने वाली एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले सात सदस्यीय दल ने एक स्वर से आर्यों के बाहर से आकर भारत में बसने विषयक मान्यता का प्रतिवाद किया था।

(देखो! हिन्दुस्तान टाइम्स ३१ अक्टूबर सन् १९७७)

(९) आर्य भारत के मूल निवासी हैं और आर्यावर्त इस देश का सबसे पुराना नाम है। यदि आर्यों के पूर्व यहाँ द्रविड़ रहते थे तो इस देश का उस समय नाम क्या था? कुछ नहीं।

अतः 'आर्य बाहर से आये' यह बात बिल्कुल निराधार एवं असत्य है। आर्य इस देश के मूल निवासी हैं।

लेकिन आज आजादी के ४५ वर्षों बाद भी हमें 'आर्य बाहर से आये' यही आत्महीनता का इतिहास पढ़ाया जा रहा है। इससे बड़ा देशद्रोह क्या होगा?

---

* Edited by A. L. Bansham Published by Clarandon Press Oxford 1975.

(३) आर्य विद्या, बल एवं वैभव तीनों में संसार में सबसे आगे थे।

स्वामी दयानंद ने लिखा है–

"यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। पारस पत्थर का नाम सुना जाता है वह बात तो झूठी है किन्तु आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारस है जिसे लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ।। मनु.(२।२०)

इसी आर्यावर्त्त देश में पैदा हुए ब्राह्मण अर्थात् विद्वानों के चरणों में बैठकर भूगोल के सब मनुष्य अपने-अपने योग्य विद्या का अध्ययन करें।

सृष्टि की आदि से महाभारत पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात भूगोल में सर्वोपरि एक मात्र राज्य था। अन्य देशों में मांडलिक अर्थात् छोटे-छोटे राजा रहते थे। सुनो! चीन का भगदत्त, अमेरिका का बब्रुवाहन, यूरोप का विडालाक्ष, ईरान का शल्य आदि सब राजा राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में यहाँ आज्ञानुसार आये थे।"

-स. प्र., समु. ११

ऋषि दयानंद को कोटिशः धन्यवाद जिन्होंने हमें आत्महीनता के गर्त से निकाला और हमें गौरवशाली इतिहास की याद दिलाया।

।। शमित्योम् ।।

साहित्यिक देन

१- सत्यार्थ प्रकाश
२- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
३- संस्कार विधि
४- वेद भाष्य
५- वेदविरुद्ध मत खण्डन
६- वेदान्ति ध्वान्त निवारण
७- शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण
८- वेदभाष्य के नमूने का अंक
९- भ्रान्ति निवारण
१०- पंच महायज्ञ विधि
११- आर्योद्देश्य रत्न माला
१२- व्यवहार भानुः
१३- भ्रमोच्छेदन
१४- अनुभ्रमोच्छेदन
१५- गोकरुणा निधि
१६- आर्य समाज के नियम
१७- आर्य समाज के उद्देश्य
१८- स्वीकार पत्र
१९- आत्मकथा (थियोसोफिस्ट में प्रकाशित)
२०- आर्याभिविनय
२१- भागवत खंडन
२२- अष्टाध्यायी भाष्य (२ भाग)
२३- वेदांग प्रकाश (१४ भाग)
२४- काशी शास्त्रार्थ
२५- हुगली शास्त्रार्थ (प्रतिमा पूजन विचार)
२६- सत्य धर्म विचार (मेला चाँदपुर)
२७- सत्यासत्य विवेक (बरेली शास्त्रार्थ)

दयानन्द की देन

ऋषि दयानंद आया ।
अंधकार को मिटाया ।।
प्रकाश किया ज्ञान का। देवता था वह तो जहान का ।।टेक।।

ओ३म् का झंडा लेकर, मैदान में स्वामी कूद पड़ा ।
पाप और पाखंडों पर, सिंह की भांति टूट पड़ा ।।
डंका वेद का बजाया ।
लंका पाप का जलाया ।।
धर्म का उद्धारक वह महान था। देवता था वह तो जहान का ।।१।।

गौ-विधवा-दलित सभी, थे दुःखों से मरते ।
रात को सभी सोते, उसकी आँखों से आँसू बहते।।
मिटाया उसने सबका दुःख ।
ऐसा था वह महापुरुष ।।
राह दिखाया जग को कल्याण का। देवता था वह तो जहान का ।।२।।

विदेशी हमारे देश में, अपना शासन थे करते ।
सदियों से सोये नींद में, खर्राटें हम थे भरते ।।
आके उसने जगाया ।
पाठ स्वराज का पढ़ाया ।।
तिल-तिल जलके दिया बलिदान था। देवता था वह तो जहान का ।।३।।

मुसीबतें बड़ी-बड़ी आईं, ऋषि कभी न हारे हिम्मत ।
काटे जाल मतों का सारे, सदा बढ़ाते रहे कदम ।।
१७ बार जहर पिया ।
महापुरुष न ऐसा हुआ ।।
न होगा 'रामकृष्ण' उसकी शान का। देवता था वह तो जहान का ।।४।।

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प १८

दयानन्द की दार्शनिक मान्यताएँ

★

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी प्रथम संस्करण : १०००

नवम्बर सन् १९९५ ई० मूल्य : २ रुपया

१. त्रैतवाद

३ अनादि पदार्थ हैं- एक ईश्वर, दूसरा जीव और तीसरा प्रकृति।
-सत्यार्थ प्रकाश, स्वमन्तव्य.

ईश्वर सत + चित + आनन्द है, जीव सत + चित है और प्रकृति सत है। अर्थात् ईश्वर की सत्ता है उसमें चेतनता है और आनन्द भी, जीव की सत्ता है उसमें चेतनता भी है परन्तु आनन्द नहीं और प्रकृति की सत्ता है उसमें चेतनता और आनन्द दोनों का अभाव है, यदि दूसरे शब्दों में कहें तो प्रकृति जड़ है।

ईश्वर- सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है।
-आर्य समाज का दूसरा नियम

जीव- इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञानानि आत्मनो लिंगानि। न्या. द.

अर्थात् जीव के ६ लक्षण हैं- इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान।
—स. प्र., समु. ७

प्रकृति- सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः ।-सा. द.

अर्थात् सत्त्व, रज और तम की साम्यावस्था को प्रकृति कहते हैं।

संसार क्या है? किसने बनाया है और क्यों बनाया है? संसार जगत है। जगत = ज+गत अर्थात् बना है, विगड़ेगा। जगत के ३ अनादि कारण हैं- ईश्वर, जीव और प्रकृति। ईश्वर जगत् का मुख्य निमित्त कारण है। ईश्वर जगत् को बनाता है, धारण करता है और प्रलय करता है। जीव जगत् का साधारण निमित्त कारण है और सृष्टि में से पदार्थों को लेकर नाना प्रकार की वस्तुएं बनाता है। प्रकृति जगत् का उपादान कारण है जो अवस्थान्तर होके बनता-बिगड़ता है। आशय यह है कि ईश्वर जगत् बनाता है, जीवों के लिए बनाता है और प्रकृति से बनाता है।

ईश्वर एक है, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है।

जीव अनेक हैं, एकदेशीय, अल्पज्ञ और अल्प-शक्तिमान् हैं।

प्रकृति जड़ है।

वेद कहता है-

> द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
> तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति,अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।। *
>
> -ऋग्वेद १/१६४/२०

अर्थात् ३ अनादि सत्ता हैं- ईश्वर, जीव और प्रकृति। यहाँ वृक्ष प्रकृति का सूचक है तथा दो पक्षी ईश्वर और जीव के प्रतीक हैं। जीव वृक्ष के फल रूप संसार के पाप-पुण्य का भोक्ता है और ईश्वर साक्षी मात्र है।

* यही मंत्र मुण्डक ३/१/१ तथा श्वेताश्वर ४/६ में है। (लेखक)

२. सृष्टि और प्रलय

नास्तिक- स्वभाव से जगत की उत्पत्ति होती है। जैसे अन्न और जल एकत्र हो सड़ने से कृमि उत्पन्न होते हैं और बीज, मिट्टी में मिलने से वृक्ष पैदा होते हैं। हल्दी, चूना और नीबू के रस मिलने से रोरी बन जाती है। वैसे ही जगत अपने आप बना है इसका कर्त्ता कोई नहीं।

उत्तर- जैसे हल्दी, चूना और नीबू का रस अपने आप नहीं मिलते किसी के मिलाने से मिलते हैं और उसमें भी यथा योग्य मिलाने से रोरी बनती है कम या अधिक मिलाने से नहीं। वैसे ही प्रकृति परमाणुओं को ज्ञान और युक्ति से परमेश्वर के मिलाये बिना जड़ पदार्थ स्वयं कुछ भी कार्यसिद्धि के लिए विशेष पदार्थ नहीं बन सकते। इसलिए स्वभाव से जगत की उत्पत्ति नहीं होती, ईश्वर के द्वारा होती है। –स० प्र० समु०८

प्रश्न (२) कल्प – कल्पान्तर में ईश्वर सृष्टि विलक्षण बनाता है या एकसा?

उत्तर- सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत ।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।।

–ऋग्वेद १०/१९०/३

अर्थात परमेश्वर जैसा पूर्व कल्प में सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, आकाश आदि बनाया था, वैसा ही अब बनाया है और आगे भी वैसा ही बनायेगा।

-स० प्र० समु० ८

प्रश्न (३) सृष्टि का प्रारम्भ है या नहीं?

उत्तर- नहीं। जैसे दिन के पूर्व रात और रात के पूर्व दिन तथा दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन बराबर चला आता है वैसे ही सृष्टि के पूर्व प्रलय और प्रलय के पूर्व सृष्टि तथा सृष्टि के पीछे प्रलय और प्रलय के पीछे सृष्टि का चक्र अनादिकाल से चला आ रहा है और अनन्तकाल तक चलता रहेगा।

–स. प्र. समु. ८

शतं तेऽयुतं हायनात् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।

इन्द्राग्नी विश्वे देवास् तेऽनुमन्यतामहृणीयमानाः।। अथर्व ८/२२१

अर्थात् १००,००० को १०० से गुणाकर उन शून्यों पर दायें से बायें क्रम से २, ३, ४ रखने से जो संख्या आता है उतना अर्थात् ४,३२,००,००,००० वर्ष सृष्टिकाल (ब्रह्म दिन) तथा उतना ही प्रलय काल (ब्रह्म रात्रि) होता है।

प्रलयकाल में जगत नष्ट हो जाता है परन्तु प्रकृति के तत्वों का नाश नहीं होता। महर्षि कपिल ने लिखा है-

नाशः कारण लयः। सा. द.

वस्तु का अपने मूल कारणों में परिवर्तित होना विज्ञान भी मानता है-

The matters are neither may be created nor may be destroyed but may be changed from one form to another.

अर्थात् पदार्थ न बनाये जा सकते हैं और न ही नष्ट किये जा सकते हैं बल्कि एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किये जा सकते हैं।

प्रलयकाल में सृष्टि के सभी तत्व अपने मूल परमाणुओं में विभक्त होकर साम्यावस्था में हो जाते हैं जिसे प्रकृति कहते हैं।

जब सृष्टि का समय आता है तो परमात्मा (जो निराकार, सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान् है) प्रकृति में विकृति उत्पन्न करता है।

प्रकृतेर्महान् महतोऽहंकारो अहंकारात् पंचतन्मात्राण्युभयेन्द्रियं पंचतन्मात्रेभ्यः स्थूलभूतानि पुरुष इति पंचविंशतिर्गणः ।। (सा द. १/६१)

अर्थात् प्रकृति से महान् महान से अहंकार, अहंकार से पंच तन्मात्राएं, एवं दोनों प्रकार की इन्द्रियां (५ कर्मेन्द्रियां- वाक, हस्त, पाद, गुदा, उपस्थ, और ५ ज्ञानेन्द्रियां- श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना एवं घ्राण)तथा मन , पंच तन्मात्राएं से पंचमहाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी) इस प्रकार २४ तत्त्व उत्पन्न होते हैं। २५ वां तत्त्व आत्मा अलग है। पंचमहाभूतों से वनस्पतियां, वनस्पतियां से अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से शरीर उत्पन्न होता है।

परन्तु आदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती (अमैथुनी होती है)। क्योंकि जब

स्त्री-पुरुषों के शरीर परमात्मा बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है तदनन्तर मैथुनी सृष्टि चलती है।

—स. प्र., समु. ८

प्रश्न (४) आदि सृष्टि में मनुष्य आदि की बाल्य, युवा या वृद्धावस्था में सृष्टि हुई थी अथवा तीनों में?

उत्तर- युवावस्था में। क्योंकि जो बाल्यावस्था में उत्पन्न होते तो उनका पालन कौन करता? और यदि वृद्धावस्था में पैदा होते तो आगे मैथुनी सृष्टि नहीं हो सकती।

—स. प्र. समु. ८

प्रश्न (५) आदि सृष्टि में एक या अनेक मनुष्य उत्पन्न हुए?

उत्तर- अनेक। क्योंकि जिन जीवों के कर्म आदि सृष्टि में उत्पन्न होने के थे उनका जन्म सृष्टि की आदि में ईश्वर देता है। -स० प्र० समु० ८

प्रश्न (६) जगत् की उत्पत्ति में कितना समय व्यतीत हुआ?

उत्तर- एक अर्व, छानवे क्रोड़, कई लाख और कई सहस्र वर्ष जगत् की उत्पत्ति और वेदों के प्रकाश होने में हुए हैं। इसका स्पष्ट व्याख्यान मेरी वनाई भूमिका में लिखा है देख लीजिये।

— स. प्र. समु. ८

एक वृन्द छानवे करोड़ आठ लाख बावन हजार नव सौ छहत्तर अर्थात् (१९६०८५२९७६) वर्ष * वेदों की और जगत् की उत्पत्ति में हो गये हैं।

-ऋ. भा. भू., वेदोत्पत्ति विषयः

* यह गणना सं. १९३३ वि० की है। इस समय सं. २०४७ वि० में सृष्टि संवत् १९६०८५३०९० है। (लेखक)

३. कर्मफल

जो जैसा कर्म करता है, उसको वैसा फल मिलता है।

प्रश्न- जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र?

उत्तर- जीव कर्म करने में स्वतंत्र और फल भोगने में परतंत्र है। जो कर्म करने में स्वतंत्र न हो तो उसको पाप-पुण्य का फल कभी नहीं प्राप्त हो सकता। क्योंकि जैसे भृत्य, स्वामी और सेनाध्यक्ष की आज्ञा अथवा प्रेरणा से युद्ध में अनेक पुरुषों को मारकर भी अपराधी नहीं होते वैसे परमेश्वर की प्रेरणा और अधीनता से काम सिद्ध हो तो जीव को पाप या पुण्य नहीं लगे। उस फल का भागी परमेश्वर होवे।

—स. प्र. समु. ७

प्रश्न (२) ईश्वर पाप क्षमा करता है वा नहीं?

उत्तर- नहीं। क्योंकि ईश्वर न्यायकारी है, जो पाप क्षमा करे तो उसका न्याय नष्ट हो जाय और सब मनुष्य अपराधी हो जायें। क्योंकि क्षमा की बात सुनके ही उनको पाप करने में निर्भयता और उत्साह हो जाये। जैसे राजा अपराधियों के पाप क्षमा कर दे तो वे उत्साहपूर्वक अधिकाधिक पाप करें। क्योंकि उनको भरोसा हो जाये कि राजा से हम हाथ जोड़ने आदि चेष्टा कर अपने अपराध छुड़ा लेंगे और जो अपराध नहीं करते वे भी अपराध करने से न डरकर पाप करने में प्रवृत्त हो जायेंगे।

प्रश्न (३) यदि हम अच्छे कर्म करते हैं तो बुरा फल क्यों मिलताहै?

उत्तर- वह हमारे इन अच्छे कर्मों का नहीं, अपितु पिछले बुरे कर्मों का ही फल होता है। जैसे- मान लो, आपके घर कोई अतिथि आया, उसके आते ही आपकी पत्नी को पुत्र पैदा हो गया तो क्या आप यह मानेंगे कि अतिथि के आने से पुत्र जन्म हुआ? नहीं, वह तो ९ माह पूर्व किये हुए आपके कर्म का फल है।

४. पुनर्जन्म

संसार में कोई सुखी तो कोई दुःखी, कोई अमीर तो कोई गरीव, कोई पशु तो कोई पक्षी, कोई वन्दर तो कोई मनुष्य क्यों है? इसका उत्तर है पुनर्जन्म। जिस जीव का जैसा पूर्व जन्म का कार्य रहा है उसको वैसा ईश्वर ने जन्म दिया है और इस जन्म में जो जैसा काम कर रहा है उसको वैसा ही जन्म ईश्वर देगा।

पुनर्जन्म ईश्वर की न्याय व्यवस्था है। जैसे चोर, डाकू जेल में स्वयं नहीं जाना चाहते परन्तु न्यायालय भेजता है, वैसे ही खराब काम करने वालों को ईश्वर मानवेतर योनियों (जेल) में भेजता है। अन्यथा कौन मानवेतर योनियों में जाना चाहता है? दूसरी वात यह भी है कि यदि जीव जन्म ही लें, मरें नहीं तो सृष्टि जाम हो जाय और यदि जीव मरें ही पुनः जन्म न लें तो सृष्टि का खेल ही खतम हो जाय। इसलिए-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च। गीता

अर्थात् जो पैदा हुए हैं वे अवश्य मरेंगे और जो मरते हैं उनका जन्म निश्चित है।

५. मुक्ति

जन्म-मृत्यु के दुःखो से छूटकर परमेश्वर के आनन्द में विचरण करना मुक्ति या मोक्ष कहलाता है।

प्रश्न (१) क्या मुक्ति में जीव का लय हो जाता है?

उत्तरः- नहीं, मुक्ति में जीव का लय कदापि नहीं होता क्योंकि जो जीव का लय हो जाता तो मुक्ति का आनन्द कौन भोगता? देखो! जीव की अनादि सत्ता है (ईश्वर की तरह) अतः जीव भी अनन्त है। इसलिए जीव की सत्ता का कभी नाश नहीं होता।

प्रश्न (२) जीव मुक्ति को प्राप्त होकर पुनः जन्म-मरण रूप दुःख में कभी आते हैं वा नहीं? क्योंकि 'यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम (गीता) इससे विदित होता है कि मुक्ति वही है कि जिससे निवृत्त होकर जीव पुनः संसार में कभी नहीं आता।

उत्तरः-नहीं, क्योंकि वेद में इस बात का निषेध किया है-

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च ।।
अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
स नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च ।।

-ऋग्वेद १/२४/१,२

(प्रश्न) हम लोग किसका नाम पवित्र जानें? कौन नाश रहित पदार्थों के मध्य में वर्त्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप हैं? कौन हमको मुक्ति का सुख भुगाकर पुनः इस संसार में जन्म देता और माता-पिता का दर्शन कराता है?

(उत्तर) हम लोग परमात्मा का नाम पवित्र जानें। वही नाश रहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है। वही हमको मुक्ति में आनन्द भुगाकर पुनः इस संसार में जन्म देता और माता-पिता का दर्शन कराता है।

प्रश्न(३) जो मुक्ति से भी जीव फिर आता है तो वह कितने समय तक मुक्ति में रहता है?

उत्तर- ते ब्रह्मलोके ह परान्त काले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे।

यह मुण्डक उपनिषद् का वचन है। ये मुक्त जीव मुक्ति को प्राप्त होके ब्रह्म में परान्तकाल तक आनन्द को भोग के पुनः महाकल्प के पश्चात् इस संसार में आते हैं। तेतालीस लाख बीस सहस्र वर्षों की एकचतुर्युगी, दो सहस्र चतुर्युगियों का एक अहोरात्र, ऐसे तीस अहोरात्रों का एक महीना, ऐसे बारह महीनों का एक वर्ष, ऐसे शत वर्षों का परान्तकाल होता है। इसको गणित की रीति से यथावत् समझ लीजिये।*

-स० प्र० समु० ९

---

* १००० चतुर्युगी = सृष्टिकाल (ब्रह्मदिन)

१००० चतुर्युगी = प्रलयकाल (ब्रह्मरात्रि)

२००० चतुर्युगी = अहोरात्र (ब्रह्मा का १ दिन)

= २०००×४३,२०,००० वर्ष (१ चतुर्युगी = ४३,२०,००० वर्ष)

= ८,६४,००,००,००० वर्ष

∴ ३० अहोरात्र = ब्रह्मा का एक माह, १२ माह = १ वर्ष और १०० वर्ष = परान्तकाल

∴ ३६,००० बार सृष्टि और प्रलय का काल

= ३६,००० × ८,६४,००,००,००० = ३१,१०,४०,००,००,००,००० वर्ष

= परान्तकाल

६.षड् दर्शन

६ दर्शन हैं- न्याय -गौतम
सांख्य -कपिल
वैशेषिक -कणाद्
योग -पतञ्जलि
मीमांसा -जैमिनि
वेदान्त -व्यास

दर्शन को शास्त्र भी कहते हैं।

अनेक आचार्यों का मत था कि छः शास्त्र परस्पर विरोधी हैं। शंकराचार्य ने वेदान्त भाष्य में अन्य दर्शनों का खण्डन किया तो अन्य आचार्यों ने वेदान्त का खण्डन किया।

महर्षि दयानन्द का मत है कि छः शास्त्र परस्पर अविरोधी हैं। महर्षि ने कहा—

"छः शास्त्रों में अविरोध देखो इसप्रकार है- मीमांसा में– 'ऐसा कोई भी कार्य जगत् में नहीं होता कि जिसके बनाने में कर्म चेष्टा न की जाय।' वैशेषिक में- 'समय लगे विना बने ही नहीं।' न्याय में- 'उपादानकारण न होने से कुछ भी नहीं बन सकता।' योग में- 'विद्या ज्ञान, विचार न किया जाय तो नहीं बन सकता।' सांख्य में- 'तत्वों का मेल न होने से नहीं बन सकता' और वेदान्त में 'बनाने वाला न बनावे तो कोई भी पदार्थ न उत्पन्न हो सके।' इसलिए सृष्टि छः कारणों से बनती है। उन छः कारणों की व्याख्या एक एक की एक एक शास्त्र में है। इसलिए उनमें विरोध कुछ भी नहीं।

जैसे छः पुरुष मिलकर एक छप्पर उठाकर भित्तियों पर धरें वैसे ही सृष्टिरूप कार्य की व्याख्या छः शास्त्रकारों ने मिलकर पूरी की हैं।

—स. प्र. समु. ८

विकासवाद खंडन

विकासवाद के अनुसार- एक प्राणी से विकसित होकर अन्य प्राणी बनें। सर्वप्रथम एक कोशिकीय प्राणी- अमीबा उत्पन्न हुआ जिससे विकसित होकर बहुकोशिकीय प्राणी- मछली, मेंढक, छिपकली, पक्षी, बन्दर आदि और अन्त में मनुष्य उत्पन्न हुए।

मैं पूछता हूँ यदि बहुकोशिकीय प्राणी एककोशिकीय प्राणी से उत्पन्न हुए तो एक कोशिकीय प्राणी★ कहाँ से उत्पन्न हुए? एककोशिकीय प्राणी से बहुकोशिकीय प्राणी कैसे उत्पन्न हो गये? अस्थिहीन प्राणी से अस्थिवाले प्राणी,

---

विज्ञान के अनुसार- प्रत्येक प्राणी का शरीर कोशिकाओं से बना होता है। कोशिकाओं में प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) होता है। प्रोटोप्लाज्म ही जीवन का आधार होता है इसलिए इसे जीवद्रव्य कहते हैं।

जीवद्रव्य के निर्माण के लिए २७ तत्त्वों की आवश्यकता होती है। इनमें तत्त्वों की % मात्रा निम्न प्रकार होती है—

तत्त्व का नाम	औसत % मात्रा	तत्त्व का नाम	औसत % मात्रा
Major elements		पोटैशियम	०.११
	६२.००	सोडियम	०.१०
कार्बन	२०.००	मैग्नीशियम	०.०७
हाइड्रोजन	१०.००	आयोडीन	०.०१४
नाइट्रोजन	३.००	लौह	०.०१
Minor elements		Trace elements	
कैल्शियम	२.५०		
फॉस्फोरस	१.१४	ताँवा आदि	०.७५६
क्लोरीन	०.१६		
सल्फर	०.१४		

नोट:- Trace elements हैं ताँबा. कोबाल्ट. मैग्नीज. जिंक. बोरान. सिलिकान फ्लोरीन. मॉलिब्डिनम. वैनेडियम. निकल. क्रोमियम. सेलीनियम. टिन. आर्सेनिक।

यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक जीव के जीवद्रव्य में सभी Trace elements हों।

सोडियम. पोटैशियम. मैग्नीशियम. कैल्शियम और क्लोरीन सदैव आयनों (Ions) के रूप में होते हैं।

—आधुनिक जन्तु-विज्ञान
(लेखक - डॉ० रमेश गुप्त

प्रश्न है क्या वैज्ञानिक प्रयोगशाला में इन तत्त्वों को मिलाकर प्रोटोप्लाज्म का निर्माण करके किसी जीवित प्राणी को पैदा कर सकते हैं? नहीं। वास्तव में मूल तत्त्वों के जड़ होने से उनके संघात में चेतन की उत्पत्ति नहीं हो सकती।

विना वाल वाले प्राणी से वाल वाले प्राणी, विना पैर वाले प्राणी से पैर वाले प्राणी, विना सींग वाले प्राणी से सींग वाले प्राणी कैसे वन गये? **विकासवाद के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं।**

विकासवादी कहते हैं- भोजन की खोज के लिए विना पैर वाले प्राणियों के शरीर में पैर निकल आये तथा आत्म-रक्षा के लिए विना सींग वाले प्राणियों के सिर पर सींग निकल आये।

मैं पूछता हूँ कनखजुरे को सैकड़ों पैरों की क्या आवश्यकता पड़ गई? केचुए को १ भी पैर क्यों नहीं है? क्या केचुए को भोजन की खोज के लिए इधर-उधर नहीं चलना पड़ता? वारहसिंघा को वहुत से सींग (२ से अधिक) क्यों होते हैं? हिरण, नीलगाय आदि पशुओं में नर के ही सींग क्यों होते हैं? क्या आत्म-रक्षा के लिए सींगों की आवश्यकता नर को ही होती है, मादा को नहीं? गाय-भैंस में नर व मादा दोनों को सींग क्यों होते हैं? घोड़ों और गधों में नर व मादा किसी को सींग नहीं होता है क्यों? क्या वे अजातशत्रु हैं? **विकासवाद के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं।**

दाढ़ी-मूँछ पुरुषों में होते हैं स्त्रियों में क्यों नहीं होते? दूध के दाँत मनुष्यों में गिर जाते है कुत्तों में क्यों नहीं गिरते? घोड़ों में ऊपर-नीचे दोनों जवड़ों में दाँत होते हैं परन्तु गाय-भैंस में केवल निचले जवड़े में दाँत होते हैं, ऊपरी जवड़े में दाँत क्यों नहीं होते? हाथी को लम्वे दाँत होते हैं, हथिनी को क्यों नहीं? मनुष्यों में स्तन सीने पर होता है परन्तु वैलों में अण्डकोषों के पास क्यों होता है? स्तनधारियों में अण्डकोष शरीर के वाहर होता है परन्तु हाथी में शरीर के भीतर होता है क्यों? **विकासवाद के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं।**

आज भी अमीवा से अमीवा, म[illegible] मेंढक से मेंढक, वन्दर से वन्दर और मनुष्य से मनुष्य पैदा हो[illegible] से हाइड्रा, मछली से मेढ़क, मेढ़क से छिपकली, छिपकली से [illegible] वन्दर से मनुष्य क्यों नहीं पैदा होते? विकास का सिलसिला मनुष्य तक आकर क्यों रुक गया है? करोड़ों

वर्ष बीत जाने पर भी मनुष्य से कुछ और क्यों नहीं बना? विकासवाद के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं।

विकासवादी कहते हैं- कि खरगोश, बन्दर और मनुष्य का भ्रूण मूलतः एक होता है क्योंकि सूक्ष्मदर्शी (Microscope) से देखने पर एक जैसा दिखाई देता है।

मैं पूछता हूँ यदि खरगोश, बन्दर और मनुष्य के भ्रूण मूलतः एक हैं तो अन्तिम अवस्था में अन्तर क्यों होता है? देखो, भ्रूण में जीन (Genes) होते हैं जिनका निर्माण माता-पिता के अनुरूप होता है। इसलिए भिन्न-भिन्न माता-पिता से बनने वाले भ्रूण मूलतः एक कैसे हो सकते हैं? जिस प्रकार चीनी, नमक और फिटकरी तीनों के घोल एक जैसे दिखाई देते हैं परन्तु वे मूलतः एक नहीं होते (चखने पर इसका ज्ञान हो जाता है) उसी प्रकार खरगोश, बन्दर और मनुष्य के भ्रूण एक जैसे दिखाई देते हैं परन्तु वे मूलतः एक नहीं होते भले ही हम उपयुक्त साधनों के अभाव में न जान सकें। फिर भी उन भ्रूणों से विकसित होने वाले बच्चे इस बात के प्रबल प्रमाण होते हैं कि उनके भ्रूण मूलतः एक नहीं थे।

विकासवादी कहते हैं- कि घोड़ों के पूर्वजों के पैरों में भी ५ अंगुलियां थीं जिनमें से ४ गायब हो गईं और बीच की अंगुली टाप बन गई। परन्तु जब गाय-भैंस की अंगुलियों का प्रश्न आता है तो कहते हैं कि उनकी बीच की अंगुली गायब हो गई और खुर बन गया। कैसा विचित्र विकासवाद है किसी में सब गायब तो बीच की मौजूद और किसी में सब मौजूद तो बीच की गायब।

डार्विन के अनुसार- गोरिल्ला, चिम्पैजी और मनुष्य एक ही जाति के प्राणी हैं।

यह उसका भ्रम है क्योंकि उसने आकृति साम्य के आधार पर निर्णय कर डाला और "समान प्रसवात्मिका जातिः" *(न्याय दर्शन २/२/६८) के नियम

* जो अपने समान सन्तान को जन्म दे उसे जाति कहते हैं।

की अवहेलना कर दी। देखों, मनुष्य में बालों का रंग वृद्धावस्था में बदल जाता है परन्तु पशुओं में नहीं। मनुष्य बिना सीखे पानी में नहीं तैर सकते परन्तु पशु बिना सीखे ही तैरने लगते हैं।

विकासवादी कहते हैं- कि सिंह और व्याघ्र के संयोग से संतान हो जाती है जिसे चीता (**Tigon**) कहते हैं।

Tigor + Lion = Tigon यह तो ठीक है। परन्तु चीता से वंश नहीं चलता इसलिए उसकी कोई जाति नहीं, क्योंकि **समान प्रसवात्मिका जातिः।** देखो, इसी इसीप्रकार घोड़ा और गधा के संयोग से संतति हो जाती है जिसे खच्चर (**Mule**) कहते हैं, परन्तु उससे वंश नहीं चलता और उसकी कोई जाति नहीं होती।

नोटः- उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विकासवाद ढकोसला है। वास्तव में जो प्राणी जिसरूप में पहले थे उसी रूप में आज भी हैं और आगे भी रहेंगे। विषम परिस्थिति के कारण कोई जाति नष्ट भले ही हो जाय परन्तु नई जाति नहीं उत्पन्न हो सकती।

।। शमित्योम् ।।

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प १९

क्रान्ति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी

नवम्बर सन् १९९५ ई०

प्रथम संस्करण : १०००

मूल्य : १ रुपया

क्रान्ति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं ।
वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं ।।

महर्षि दयानंद महान् देशभक्त थे। उनमें देश-प्रेम कूट-कूटकर भरा हुआ था। गुरु विरजानन्द ने गुरु दक्षिणा में उनसे २ बातें माँगी थीं- (१) वेद का प्रकाश करके संसार को सन्मार्ग दिखाना और (२) स्वराज्य का मंत्र फूँककर देश को आज़ाद करना। स्वामी दयानंद ने गुरु की आज्ञा का पालन अपना जीवन लक्ष्य बना लिया और गुरु के आदेश को शिरोधार्य कर कर्मक्षेत्र में उतर पड़े।

महर्षि का ऐसे समय में कर्म-क्षेत्र में पदार्पण हुआ, जब सारा संसार अज्ञान अंधकार में डूबा हुआ था और भारत माता गुलामी की बेड़ियों में जकड़ी हुई थी। सन् '५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम को अंग्रेजों ने बड़ी ही निर्दयता और क्रूरता से कुचल दिया था। उस समय आजादी की बात करना मौत को निमंत्रण देना था। भारत की राष्ट्रीय चेतना मृतप्राय हो चुकी थी। ऐसे लोगों की कमी नहीं थी जो देश की गुलामी के अभिशाप को वरदान मान बैठे थे। उदाहरण के लिए, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अंग्रेजी राज्य को शुभ कामना व्यक्त किया-

"ईश्वर करे जब तक फूलों में सुगन्धि है इनके राज्य की वृद्धि हो।"

—भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग २, पृ. ६२६

तथा रवीन्द्र नाथ टैगोर ने अंग्रेजों को भाग्य विधाता कहा-

"जन गण मन अधिनायक जय हे, भारत भाग्य विधाता।"

--गीतांजलि

ऐसे विषमकाल में ऋषि दयानंद ने जिस प्रकार 'वेदों की ओर लौटो'

का नारा लगाकर अज्ञान अंधकार में भटक रहे संसार को वेद का प्रकाश दिया उसी प्रकार 'आर्या आर्यावर्तीयाः' का शंखनाद कर गुलामी की बेड़ी में जकड़े भारत को स्वराज्य का मंत्र दिया। उन्होंने सारे देश में घूम घूमकर गुलामी की गहरी नींद में सोये हुए देशवासियों को झकझोरकर जगाया और देश-प्रेम का पाठ पढ़ाया। उन्होंने कहा- "कोई कितना ही क्यों न करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

सत्यार्थ प्रकाश, समु. ८

महर्षि महान् राष्ट्रवादी थे। संसार का उपकार करने के साथ ही महर्षि को देश का उद्धार करना अभीष्ट था। इसीलिए उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की और लोगों को आर्य समाज के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने की अपील की- "जो उन्नति करना चाहो तो आर्य समाज के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलो, नहीं तो कुछ भी हाथ नहीं लगेगा। क्योंकि हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे भी होगा, उसकी उन्नति तन-मन-धन से सब जने मिलकर प्रीति से करें। इसलिए जैसा आर्यसमाज देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता। यदि इस समाज को यथावत् सहयोग देवें तो बहुत अच्छी बात है, क्योंकि समाज का सौभाग्य बढ़ाना समुदाय का काम है, एक का नहीं।"

स. प्र. समु. ११

महर्षि बहुत बड़े देश-भक्त थे। 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' अर्थात् **वसुधैव कुटुम्बकम्** के उच्च आदर्श के उपासक होते हुए भी वे भारत को वसुधा का सिरमौर मानते थे। वे लिखते हैं-

यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में कोई दूसरा देश नहीं

है। आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूते ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

एतद्देशप्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्वमानवाः।।मनु.(२।२०)

इसी देश में पैदा हुए ब्राह्मण अर्थात् विद्वानों से भूगोल के मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, दस्यु, म्लेच्छ आदि सब अपने-अपने योग्य विद्या चरित्रों की शिक्षा और विद्याभ्यास करें।

सृष्टि से लेके महाभारत पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एक मात्र राज्य था। अन्य देशों में मांडलिक अर्थात् छोटे-छोटे राजा रहते थे। क्योंकि कौरव-पांडव पर्यन्त यहाँ के राज्य और शासन में भूगोल के सब राजा और प्रजा चले थे। सुनो! चीन का भगदत्त, अमेरिका का बब्रुवाहन, यूरोप का विडालाक्ष, ईरान का शल्य आदि सब राजा राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में आज्ञानुसार आये थे।"

स. प्र., समु. ११

महर्षि देश की पराधीनता से अत्यन्त दुःखी थे। देश की पराधीनता के कारण महर्षि के दिल में जो वेदना थी उसे व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं-

"अब अभाग्योदय और आर्यों के आलस्य, प्रमाद एवं परस्पर विरोध से अन्य देशों में राज्य करने की तो बात ही क्या कहना, किन्तु आर्यावर्त (अपने देश) ही में आर्यों का अखंड, स्वतंत्र, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है।"

स. प्र. समु. ८

सदियों से गुलामी की चक्की में पिसते आ रहे देश को देखकर वे बड़े चिन्तित रहते थे।

एक टीस जिगर में होती है, एक दर्द सा दिल में होता है।
हम रात को बैठके रोते हैं, जब सारा आलम सोता है।।

एक दिन आधी रात को जब एक भक्त की नींद खुली तो देखा कि स्वामी जी बैठे हैं। लेकिन यह क्या? स्वामी जी की आँखों में आँसू। उसने पूछा- "स्वामी जी क्या कष्ट है? क्या चिकित्सक को बुलावें?" स्वामी जी ने उत्तर दिया- वत्स। ८०० वर्षों से भारत माता पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ी हुई है, परन्तु देशवासी गहरी निद्रा में सोये हुए हैं। इससे बड़ा कष्ट क्या हो सकता है? मेरे दर्द की दवा किसी चिकित्सक के पास नहीं अपितु ३२ करोड़ आर्य जाति के हाथों में है। यदि आर्य जाति जाग जाय और पराधीनता का जुआ उतारकर फेंक दे तो मेरा दर्द दूर हो सकता है।

महर्षि धुन के धनी एवं सिद्धान्त के पक्के थे। वे अपने लक्ष्य पर अडिग थे और साहस एवं निर्भीकता से कठिनाइयों का सामना करते थे। यद्यपि उनके सामने अनेकानेक बाधाएं आईं, प्रलोभन आये, धमकियां आयीं, ईंट-पत्थर मारा गया, गालियां दी गयीं, विष दिया गया, परन्तु उनके कदम कभी रुके नहीं। वे अपने रास्ते से कभी पीछे नहीं हटे, बल्कि सदैव आगे ही बढ़ते गये। ठीक ही कहा है-

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।

--भर्तृहरि नीतिशतकम्, श्लोक ८५

महर्षि दयानन्द महान् क्रान्तिकारी थे। उनके विचार जादू की तरह प्रभाव डालते थे। उनके शब्द ही बम थे। उनके उपदेशों से क्रान्ति की चिन्गारियां निकलती थीं जो मुरदा में भी जान डाल देती थीं। उनके अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश* को पढ़कर कितने क्रान्तिकारी बन जाते थे और सर पर कफन बाँधकर

* अमर शहीद पं. राम प्रसाद विस्मिल ने अपनी आत्म कथा में लिखा है- "मैंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। इससे तख्ता ही पलट गया।"

स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ते थे। श्याम जी कृष्ण वर्मा जिन्होंने भारत की आजादी का अलख जगाने के लिए अंग्रेजों के घर में (लंदन में) इंड़ियन हाउस (Indian House) की स्थापना की, पंजाव केसरी ला० लाजपत राय जिन्होंने अमेरिका में इंडियन होम रूल लीग (Indian Home Rule League) की स्थापना की तथा स. अजीत सिंह (स. भगत सिंह के चाचा) जिन्होंने इटली में आजाद हिन्दुस्तान लश्कर की स्थापना की (जिसे बाद में नेता जी सुभाषचन्द्र वोस ने आजाद हिन्द फौज का रूप दिया) सभी महर्षि के शिष्य थे। स्वामी श्रद्धानन्द जिन्होंने रौलट एक्ट विरोधी जुलूस का नेतृत्व करते हुए चाँदनी चौक (दिल्ली) में अंग्रेजों की संगीनों के सामने सीना खोल दिया था, महर्षि के परम भक्त थे। स. भगत सिंह, ठा. रोशन सिंह, पं. रामप्रसाद विस्मिल आदि महर्षि की शिष्य परम्परा में ही आते हैं। राष्ट्र-पिता महात्मा गांधी में भी राष्ट्रीयता का मंत्र महर्षि की शिष्य परम्परा से ही पहुँचा था। क्योंकि गांधी जी ने गोपाल कृष्ण गोखले से राष्ट्रीयता की शिक्षा प्राप्त किया, गोखले ने महादेव गोविन्द रानाडे से राष्ट्रीयता का पाठ सीखा और रानाडे महर्षि को अपना गुरु मानते थे।

महर्षि ने सन् १८७५ में आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने देश की आजादी की लड़ाई में अहं भूमिका निभाई। स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वालों, जेल जाने वालों और फाँसी पर लटकने वालों में ८०% आर्यसमाजी ही थे।

देशभक्त आर्य वीरों ने अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंका और अंग्रेजों को ७ समुन्दर पार खदेड़ दिया, जिसके फलस्वरूप देश आजाद हुआ।

१५ अगस्त सन् ४७ को देश आजाद हुआ। परन्तु यह आजादी अधूरी है। क्योंकि देश मानसिक दृष्टि से अव भी गुलाम है। विदेशी लोग (कपोल कल्पित फर्जी देवी-देवता) देशवासियों के दिमाग से निकले नहीं है। विष्णु (पृथ्वी से १६ करोड़ योजन दूर बैकुंठ वासी) तथा शिव (पृथ्वी से १६x१६=२५६ करोड़ योजन दूर कैलाशवासी) देवता आज भी उसके दिमाग में घुसे हुए हैं।

-संक्षिप्त स्कन्द पु., गीता प्रेस (गोरखपुर) पृ. ५७६

इसलिए हमारा प्यारा देश भारत तब पूर्ण आजाद होगा जब इन विदेशी देवताओं से पीछा छूटेगा। महर्षि देश को पूर्ण आजाद देखना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने जहाँ विदेशी अंग्रेजों का बगावत किया, वहाँ विदेशी देवताओं का भंडाफोड़ भी किया। महर्षि द्वारा स्थापित आर्य समाज अपने जन्मकाल से ही इस दिशा में प्रत्यत्नशील है और उसे आंशिक सफलता भी मिला, परन्तु पूर्ण सफलता तो तब कहा जायेगा जब देश पूर्ण आजाद हो जायेगा।

देश को पूर्ण आजाद कराने के लिए आज आवश्यकता है कि देशवासी देश भक्त विदेशी देवताओं से देश को मुक्त कराने में दिल खोलकर आर्य समाज का सहयोग करें।

ईश्वर करे वह दिन कब देखने को मिले कि हमारा प्यारा देश भारत पूर्ण आजाद हो जाय जिससे देशवासी चैन की वंशी वजाते हुए नजर आयें। सभी सुखी रहें और कोई दुःखी न हो। **सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।** महर्षि के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम महर्षि के पद चिन्हों पर चलने का व्रत (दृढ़ संकल्प) लें, आर्य समाज के सिद्धान्तानुकूल आचरण स्वीकार करें, देश को पूर्ण आजाद करायें और संसार को आर्य वनायें।

।। शमित्योम् ।।

क्रान्ति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द

(गीत)

सभी लोग प्रेम से बोलो, महर्षि दयानन्द की जय ।
महर्षि दयानन्द की जय, महर्षि दयानन्द की जय ॥

स्वामी दयानन्द देश के लिए, अपना जीवन दान दिए ।
तिल-तिल जलके स्वामीजी, देशहित बलिदान किए ॥

स्वराज्य का मंत्र फूँकके, स्वामी जी हमें जगाए ।
'आर्यावर्त्त आर्यावर्तीयाः' स्वामी जी हमें बताए ॥

देश भर में घूमके ऋषि, आजादी का पाठ पढ़ाए ।
स्वदेशी राज्य सबसे अच्छा, वे हमको समझाए ॥

महर्षि दयानन्द के शिष्य बने, देश भक्त थे जितने ।
कितने लोग जेल गये, फाँसी पर लटके कितने ॥

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय, ऋषि के शिष्य बने ।
बिस्मिल, आजाद, भगत, सुखदेव उनके शिष्य बने ॥

गुलामी की गहरी नींद से, ऋषिराज हमें जगाए ।
विदेशी सारे भाग गये, ऐसा बिगुल बजाए ॥

महर्षि दयानन्द महान् क्रान्तिकारी, क्रान्ति के अग्रदूत थे ।
हम श्रद्धा-सुमन अर्पित करते, वे भारत के सपूत थे ॥

महर्षि दयानन्द का नाम, अमर रहेगा इतिहास में ।
जब तक सूरज-चाँद रहेगा, गूँजेगा आकाश में ॥

सभी लोग प्रेम से बोलो, महर्षि दयानन्द की जय ।
महर्षि दयानन्द की जय, महर्षि दयानन्द की जय ॥

□□

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प १०

सत्य के योद्धा स्वामी दयानन्द

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

★

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी प्रथम संस्करण : १०००

नवम्बर सन् १९९५ ई० मूल्य : १ रुपया

सत्य के योद्धा स्वामी दयानन्द

स्वामी दयानन्द की सत्य में अटूट श्रद्धा एवं दृढ़ विश्वास था

इसीलिए स्वामीजी ने लिखा है- "सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः। (मुण्डक) अर्थात् सत्य की विजय और असत्य की पराजय होती है तथा सत्य से ही विद्वानों का मार्ग प्रशस्त होता है।

सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।" —सत्यार्थ प्रकाश, भूमिका

श्रीमान् भोलानाथ ने अति खेद से कहा- "महाराज! जैनमत वालों ने समाचार पत्रों में एक विज्ञापन निकलवाया है, जिससे विदित होता है कि वे लोग आपको कारागार में डालना चाहते हैं।" स्वामी जी ने गंभीरता से उत्तर दिया- "भाई! सोने को जितना ही तपाया जाता है उतना ही कुन्दन होता है। विरोध की आँच से सत्य की कान्ति चौगुनी चमकती है।"

स्वामी दयानन्द सत्य को सर्वोपरि मानते थे।

स्वामी जी ने अंधविश्वासों का खंडन किया और कहा- "जब किसी ग्रहग्रस्त ग्रहरूप ज्योतिर्विदाभाप के पास जाके कहते हैं कि 'हे महाराज इसको क्या है?' तब वे कहते हैं कि 'इस पर सूर्यादि क्रूर ग्रह चढ़े हैं। जो तुम इनकी शान्ति, पाठ, पूजा, दान कराओ तो इसको सुख हो जाय, नहीं तो बहुत पीड़ित होकर मर भी जाय तो भी आश्चर्य नहीं।'

कहिए ज्योतिर्वित्! जैसे यह पृथ्वी जड़ है, वैसे ही सूर्यादि लोक हैं। वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न कुछ भी नहीं कर सकते। क्या वे चेतन हैं जो क्रोधित होके दुःख और शान्त होके सुख दे सकें?"

—स. प्र. समु. २

स्वामी जी ने गुरुडम का विरोध किया और कहा-

"यानि अस्माकं सुचरितानि तानि त्वयो उपास्यानि नो इतराणि।"

– तैत्तिरीय उपनिषद् (१।११)

अर्थात् माता, पिता और आचार्य अपने शिष्यों को यह भी कहें कि वे हमारे सद्गुणों का ही अनुकरण करें दुर्गुणों का नहीं।" - स. प्र. समु.२

स्वामी जी ने सत्य और असत्य को जाँचने के लिए एक कसौटी दिया और कहा-

परीक्षा पाँच प्रकार से होती है-

(१) जो वेदानुकूल हो वह सत्य और जो वेद विरुद्ध हो वह असत्य है।

(२) जो सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वह सत्य और जो इसके विपरीत हो असत्य है।

(३) जो आप्त वचन के अनुकूल हो वह सत्य और जो इसके विपरीत हो असत्य है।

(४) जो आत्मा के अनुकूल हो वह सत्य और जो इसके विरुद्ध हो वह असत्य है।

(५) आठों प्रमाण- प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, संभव और अभाव।"

– स. प्र., समु. ३

स्वामी दयानन्द सत्य के हिमायती थे।

स्वामी जी ने अपने मन्तव्य और सिद्धान्त के अनुकूल, युक्ति और प्रमाण से समन्वित तथा सत्य एवं निर्भ्रान्त होते हुए भी कहा- "इस ग्रंथ में जो कहीं भूल-चूक से अथवा शोधने छापने में भूल-चूक रह जाय, उसको जानने जनाने पर जैसा वह सत्य होगा वैसा ही कर दिया जायेगा।"

स्वामीजी जब कार्यक्षेत्र में आये तो दशो दिशाओं में उनकी कीर्ति फैलने लगी। वे जहाँ जाते उनका अपूर्व स्वागत होता। कलकत्ता में ब्रह्म समाज के नेता बैरिस्टर केशव चन्द्र सेन स्वामी जी के उपदेशों से बहुत प्रभावित हुए

और उसने निवेदन किया- "स्वामी जी यदि आप संस्कृत की जगह हिन्दी में भाषण और सामान्यजन की तरह वस्त्र धारण करें* तो और भी बड़े जन समुदाय को प्रभावित कर सकते हैं।" स्वामी जी ने केशव चन्द्र सेन का सत्य सुझाव सहर्ष मान ली। तब से स्वामी जी वस्त्र धारण करने लगे और हिन्दी सीखकर हिन्दी में भाषण करने लगे।

स्वामी दयानंद में सत्य कूट-कूटकर भरा हुआ था!

सन् १८३६ की शिवरात्रि थी। गाँव के शिवालय में भक्तगण एकत्र थे। मूल शंकर** भी अपने पिता श्री कसरन तिवारी के साथ उपस्थित हुए। सबने पूरे दिन व्रत रखा था और शिव का जाप कर रहे थे। आधी रात होते-होते सब ऊँघने लगे और सो गये लेकिन १३ वर्षीय बालक मूलशंकर शंकर के जागरण का दृढ़ निश्चय किया था और पूरी आस्था से जाग रहा था।

मूल शंकर जप रहा था- 'ओऽम् नमः शिवाय। ओऽम् नमः शिवाय।' इतने में उसने देखा कि 'एक चूहा आकर मूर्ति पर चढ़ गया और प्रसाद खाने लगा। इतना ही नहीं उस चूहा ने मल-मूत्र से मूर्ति को अपवित्र भी कर दिया।'

मूलशंकर ने सोचा-
शंकर जी इस पिण्डी से निकलेंगे ।
अपने त्रिशूल से अभी इसे कुचलेंगे ।।
फल करनी का पायेगा चूहे अभागे ।
तेरी औकात क्या है शंकर के आगे ।।

परन्तु शंकर जी पिण्डी से नहीं निकले तो मूल शंकर ने निश्चय किया-

यह केवल जड़ है, चेतन शिव है दूजा ।
हाँ, मूढ़ पुरुष ही इसकी करते पूजा ।।
संकल्प किया जड़मूर्ति नहीं पूजूँगा ।।
हाँ, सच्चे शिव को मैं अवश्य निरखूँगा ।।

---

*क्योंकि उस समय तक स्वामीजी कौपीन (लंगोट) धारण करते थे।
** स्वामी दयानंद का बचपन का नाम मूल शंकर था।

—लेखक

सच्चे शिव (शंकर) की खोज में मूल शंकर ने माता की ममता और पिता के प्यार को त्याग दिया, सारी सम्पत्ति और सुख को लात मार दिया, वर्षों नदियों और नालों के किनारे भटकते रहे। पहाड़ों और जंगलों की खाक छानते रहे, ओखी मठ के महन्त को फटकार दिया, दंडी गुरु विरजानन्द प्रज्ञाचक्षु की कुटिया का दरवाजा खटखटाया, विवाह नहीं किया, आजीवन ब्रह्मचर्य रहे, पाखंडों का खंडन किया और वेदों का प्रचार किया। उपदेश दिया और शंका-समाधान किया, शास्त्रार्थ किया और ग्रंथ लिखा, आर्य समाज की स्थापना किया, १७ बार विष पिया और बलिदान हो गया।

स्वामी दयानन्द सत्य के प्रचारक थे।

स्वामी जी ने वेदों का भाष्य किया और कहा-

" यह भाष्य ऐसा होगा कि जिससे वेदार्थ से विरुद्ध अबके बने भाष्य और टीकाओं से वेदोंमेंभ्रम सेजोमिथ्या दोषों के आरोप हुए हैं वे सब निवृत्त हो जायेंगे और इस भाष्य से वेदों का जो सत्य अर्थ है सो संसार में प्रसिद्ध होगा।" -ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका

स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश की रचना की और कहा-

"मेरा इस ग्रंथ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना।" -सत्यार्थ प्रकाश भूमिका

स्वामी जी ने आर्य समाज की स्थापना की और कहा-

"सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करना चाहिए। सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" —आर्य समाज के नियम

स्वामी दयानन्द सत्य के योद्धा थे।

स्वामी जी ने सभी प्रलोभनों को ठुकरा दिया-

ओखी मठ। महन्त- "दयानन्द! आखिर इस अवस्था में तुमने क्यों घर-द्वार छोड़ दिया?" दयानन्द- "ज्ञान की पिपासा शान्त करने के लिए, महाराज।" महन्त- "क्या?" दयानन्द- "बाल्यकाल से ही मेरे जीवन में अनेक झंझावात उठते रहे हैं, महाराज। मुझे वह दिन याद है जब मैंने शिव की मूर्ति पर चूहों को उत्पात करते हुए देखा। परन्तु भगवान् उन्हें सजा देना तो दूर मना भी नहीं कर सके और पत्थर ही बने रहे। मैं समझ गया कि यह मूर्ति ईश्वर नहीं। मैं ईश्वर का दर्शन करना चाहता हूँ। मैं वह दिन नहीं भूलूँगा जब मृत्यु मेरी बहिन को उठा ले गयी और सभी देखते रह गये। मैं मृत्यु पर विजय पाना चाहता हूँ।" महन्त- (आश्चर्य से) "ईश्वर का दर्शन और मृत्यु पर विजय। अच्छा तो तुमने क्या किया?" दयानन्द- "महाराज! जब मैंने देखा कि मैं बन्धन में बँधने जा रहा हूँ तो सारे बन्धन तोड़कर चल दिया। मैं योगियों की खोज में भटकता रहा हूँ और आपका नाम सुनकर यहाँ आया हूँ।"

महन्त- "दयानन्द! मैं तुम्हारे साहस और साधना पर मुग्ध हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम यहीं रहो और मेरे बाद गद्दी सँभालो।" दयानन्द- "लेकिन, महाराज! मैं एक जगह बँधकर नहीं रह सकता। मुझे तो अपने लक्ष्य पर आगे बढ़ना है।"

महन्त- "दयानन्द! जो समस्याएं तुम उठा रहे हो, उनका समाधान न हुआ है और न होगा। यह शरीर भगवान् की दी हुई अमूल्य निधि है। इसको कष्ट देना शोभा नहीं देता।" दयानन्द- "महाराज! मुझे क्षमा करें। मैं आपके सोने-चाँदी रत्नों के भंडार को देख रहा हूँ। मैं आपके हाथी और घोड़ों को देख रहा हूँ। लेकिन ये मेरे लिए नये नहीं हैं। मेरे घर भी ये सब कुछ था और इसके अतिरिक्त वहाँ माता की ममता और पिता का प्यार भी था। वहाँ परिचितों का स्नेह और एक अपरिचित प्राणी का प्रणय बन्धन भी था। फिर भी मैं वहाँ बंध न सका। आप मुझे सोने की जंजीर में बाँधना चाहते हैं लेकिन जंजीर चाहे लोहे की हो या सोने की, जंजीर है और जंजीर से कुत्ते बाँधे जाते हैं, मनुष्य नहीं। इसलिए आप मुझे नहीं बाँध सकते हैं। मैं जा रहा हूँ।" स्वामी जी चल देते हैं।

स्वामी जी ने राजा महाराजाओं को फटकार दिया-

जोधपुर। स्वामी जी प्रताप सिंह के साथ राजमहल में प्रवेश करते हैं। वहाँ महाराजा जसवन्त सिंह को नन्हीं जान वेश्या की पालकी को कंधा देते हुए देखकर स्वामी जी खिन्न हो उठे। उन्होंने महाराजा को फटकारते हुए कहा— "शेर की माद में कुतिया। राजन्! राजा सिंह के समान होता है और वेश्या कुतिया के समान। राजा और वेश्या का संग अच्छा नहीं। यह अत्यन्त लज्जा की बात है।"

स्वामी जी ने दुष्टों एवं आताताइयों की उपेक्षा किया-

जोधपुर जाते समय भक्त जन स्वामी जी से निवेदन करते हैं- "स्वामी जी आप जोधपुर न जायें। वहाँ के लोग बड़े दुष्ट हैं। वे आपकी बातों को नहीं मानेंगे। वे आपका कुछ अनिष्ट न करें।"स्वामी जी निर्भीकता से उत्तर देते हैं- "वत्स। चाहे मेरी अंगुलियों को बत्तियां बनाकर जला दें लेकिन मैं सत्य के प्रचार से कदम कदापि नहीं मोड़ सकता।"

स्वामी जी की सत्य-निष्ठा को देखकर ही योगिराज अरविन्द घोष ने उन्हें 'सत्य का योद्धा' कहा है। बंकिम, तिलक और दयानंद पृ. ५०

स्वामी दयानन्द! तू धन्य है जिसने मान-अपमान और सुख-दुःख की चिन्ता छोड़कर अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर बढ़ता ही गया और कदम कदापि पीछे नहीं हटाया। स्वामी जी! तुम्हें कोटिशः धन्यवाद जिसने सदैव संसार को अमृत पिलाया और स्वयं १७ बार विष पीकर बलिदान हो गया।

।। शमित्योम् ।।

आर्य समाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्,न्यायकारी,दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्येश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प २१

सत्यार्थ प्रकाश दर्पण

★

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी प्रथम संस्करण : १०००

नवम्बर सन् १९९५ ई० मूल्य : २ रुपया

□□

सत्यार्थ प्रकाश दर्पण

(१) भूमिका

परम पिता परमेश्वर बड़ा दयालु है उसने हमें देखने के लिए आँखें तथा सोचने के लिए बुधि (अन्तः चक्षु) दिया है। इतना ही नहीं उसने आँखों की सहायता के लिए सूर्य का निर्माण किया है तथा बुद्धि की सहायता के लिए वेदों का ज्ञान दिया है।

आदि सृष्टि से लेकर महाभारत काल तक संसार में वेदों का प्रकाश था, जिससे सर्वत्र सुख-शान्ति थी। परन्तु महाभारत के बाद वेद-रूपी सूर्य अस्त हो गया और लोग मत-पंथों की पगडंडियों में भटकने लगे एवं ठोकरें खाने लगे। त्रिविध तापों से पीड़ित मानवता त्राहि-त्राहि कर उठी।

ईश्वर की कृपा से ऐसे समय एक ऋषि का पदार्पण हुआ जिसकी आदि में दया और अन्त में आनन्द था, जो स्वामी दयानन्द सरस्वती के नाम से विश्व विख्यात हुआ।

देव दयानन्द का दयालु दिल देश-दुनियां की दुर्दशा एवं दुःखों को देखकर द्रवित हो गया। उसने मानवता के उद्धार का बीड़ा उठाया। उसने सत्यार्थ प्रकाश की रचना करके कहा- "वेदों की ओर लौटो।"

(२) सत्यार्थ प्रकाश की रचना का उद्देश्य

महर्षि दयानंद ने अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है-

१- मेरा इस ग्रंथ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना।

क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

२- इसमें यह अभिप्राय रक्खा गया है कि जो-जो सब मतों में सत्य-सत्य बातें हैं वे-वे सबमें परस्पर अविरुद्ध होने से उनका स्वीकार करके जो-जो मत-मतान्तरों में मिथ्या बातें हैं उन-उनका खंडन किया है।

—स० प्र० भूमिका

३- इन सब मतवादियों इनके चेलों और अन्य सबको परस्पर सत्यासत्य के विचार करने में अधिक परिश्रम न करना पड़े, इसलिए यह ग्रंथ बनाया है।

पक्षपात को छोड़कर इसको देखने से सत्यासत्य मत सबको विदित हो जायेगा।

-स०प्र० अनुभूमिका १

४- मेरा कोई नवीन कल्पना वा मत मतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है, किन्तु जो सत्य है उसको मानना-मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना-छुड़वाना मुझको अभीष्ट है।

५- सर्व सत्य का प्रचार कर सबको ऐक्य मत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुख लाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे जिससे सब लोग सहज से धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और अभिनन्दित होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।

-स०प्र०, स्वमन्तव्य०

(३) सत्यार्थ प्रकाश की विशेषताएँ

१- सत्यार्थ प्रकाश स्वामी दयानंद का मुख्य ग्रंथ है। यह अनुपम एवं अद्वितीय ग्रंथ है। इसमें उनके सभी ग्रंथों का सारांश आ जाता है।

२- इसको पढ़े बिना कोई भी ऋषि के सिद्धान्तों को भली प्रकार नहीं

जान सकता और अन्यों के उपदेशों में प्रतिपादित मिथ्या मन्तव्यां को नहीं पहचान सकता।

३- आर्य भाषा (हिन्दी) में यह प्रथम आर्ष ग्रंथ है।

४- सत्यार्थ प्रकाश के चौदह समुल्लास १४ रत्न हैं जिन्हें स्वामी दयानंद ने साहित्य मंथन करके निकाला।

५- सत्यार्थ प्रकाश गागर में सागर है। इसमें जितने ग्रंथों के प्रमाण दिये हैं उतने अन्यत्र दुर्लभ हैं। इस ग्रंथ में २९० ग्रंथों के १८८६ प्रमाण उद्धृत हैं।

६- इसमें ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषि-मुनियों के विचारों का संग्रह है।

७- स्वार्थी, दुराग्रही लोगों ने जो वेदों का अनर्थ करके उन्हें कलंकित किया था उनके मिथ्या अर्थों का खंडन और सत्य अर्थों का मंडन अकाट्य युक्तियों एवं प्रमाणों द्वारा किया गया है।

८- वेद ज्ञान-विज्ञान का भंडार है। वेद को समझने के लिए यह ग्रंथ कुंजी का कार्य करता है।

९- इसमें दार्शनिक सिद्धान्तों को सरल ढंग से समझाया गया है।

१०- इसमें मानव के लौकिक एवं पारलौकिक सभी समस्याओं का समाधान है।

११- भारत का पतन कैसे हुआ और भारत वर्षोन्नति कैसे हो सकती है। इसका विवेचन इसमें है।

१२- इसमें ऋषि ने सब मत-मतान्तरों को नष्ट कर एक सत्य मतस्थ करने के उपाय बताये हैं।

१३- किसी नये मत की कल्पना का इस ग्रंथ में संकेत भी नहीं है।

१४- इस ग्रंथ में सत्य का प्रकाश किया गया है।

(४) सत्यार्थ प्रकाश की लोकप्रियता

सत्यार्थ प्रकाश का प्रायः सभी भाषाओं- संस्कृत, उर्दू, सिन्धी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, तामिल, तेलगू, असमी, उड़िया, कन्नड़, मलयालम तथा प्रमुख विदेशी भाषाओं– अंग्रेजी, चीनी, जर्मन, फ्रेंच, रूसी, नेपाली, स्वाहिली में भी इसका अनुवाद हो चुका है।

सत्यार्थ प्रकाश के अनेकों संस्करण निकल चुके हैं और उसकी करोड़ों प्रतियां छपकर घर-घर पहुँच चुकी हैं।

(५) सत्यार्थ प्रकाश की प्रामाणिकता

सत्यार्थ प्रकाश की रचना के पीछे राजा जयकृष्ण दास (C.S.I.) मुरादाबाद की प्रेरणा थी। स्वामी जी से उनकी भेंट सर्वप्रथम सन् १८७४ में काशी में हुई थी। उस समय राजा साहब वाराणसी के डिप्टी कलक्टर थे। वे स्वामी जी के विचारों से बड़ा प्रभावित हुए और उन्होंने स्वामी जी से निवेदन किया कि यदि आप अपने विचारों को किसी ग्रंथ के रूप में निबद्ध कर दें तो उससे अधिकाधिक लोगों को लाभ पहुँचेगा। क्योंकि प्रवचनों से तो उन्हीं को लाभ मिलेगा जो उन्हें सुनने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं। स्वामी जी को राजा साहब का यह सुझाव अत्यधिक उचित मालुम हुआ। राजा साहब ने यह भी आश्वासन दिया कि यदि ग्रंथ लिखा जाता है तो उसके मुद्रण एवं प्रकाशन का सारा आर्थिक भार वे स्वयं वहन करेंगे।

तदनुकूल स्वामी जी ने काशी में ही १२ जून सन् १८७४ को सत्यार्थ प्रकाश के लेखन का कार्य आरम्भ कर दिया। यद्यपि उस समय तक स्वामी जी का हिन्दी (आर्य भाषा) पर पूर्ण अधिकार नहीं हो सका था तथापि ग्रंथ रचना के महत्त्व को देखते हुए उन्होंने इस कार्य को प्राथमिकता दी।

सत्यार्थ प्रकाश का प्रथम संस्करण सन् १८७५ ई. में स्टार प्रेस बनारस में मुद्रित और प्रकाशित हुआ।

इस संस्करण में लिपिकर्त्ता ने पूर्वाग्रह के कारण मृतक श्राद्ध और मांसाहार की बातें भी उसमें प्रक्षेप कर दिया था तथा अन्तिम दो समुल्लास (१३वां और १४वां समुल्लास) नहीं छप सके थे। सन् १८७७ में एक स्थान पर स्वामी जी प्रवचन में मृतक श्राद्ध का खंडन कर रहे थे, तभी एक व्यक्ति उठकर बोला- "स्वामी जी! आपने पुस्तक में मण्डन किया है, किन्तु प्रवचन में खण्डन कर रहे हैं।" उसने पुस्तक भी दिखाया। स्वामी जी ने कहा- "आक्षेप उचित है। लेखकों ने मेरे आशय के विरुद्ध लिख दिया है।" स्वामी जी ने सन् १८७८ में एक विज्ञापन छपाया जो यजुर्वेद के टाइटिल पृष्ठ पर छपा- "सबको विदित हो कि जो बातें मेरे बनाये सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि आदि ग्रंथों में गृह्य सूत्रों या मनुस्मृति के बहुत से वचन लिखे हैं वे उन ग्रंथों के मतों को जानने के लिए लिखे हैं।"

सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय संस्करण संशोधित करके स्वामी जी ने स्वयं लिखा जब उन्हें आर्य भाषा (हिन्दी) का पूर्ण ज्ञान हो गया। उन्होंने लिखा है- "जिस समय मैंने यह ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' बनाया था उस समय और उससे पूर्व संस्कृत भाषण करने, पठन-पाठन में संस्कृत ही बोलने और जन्म भूमि की भाषा गुजराती होने के कारण मुझको इस भाषा का विशेष परिज्ञान न था, इससे भाषा अशुद्ध बन गयी थी। अब भाषा बोलने और लिखने का अभ्यास हो गया है इसलिए इस ग्रंथ को भाषा व्याकरणानुसार शुद्ध करके दूसरी बार छपवाया है। यह ग्रंथ १४ चौदह समुल्लास अर्थात् १४ विभागों में रचा गया है। इसमें १० दस समुल्लास पूर्वार्द्ध और ४ चार उत्तरार्द्ध में बने हैं, परन्तु अन्त के दो समुल्लास और पश्चात् स्वसिद्धान्त किसी कारण से प्रथम नहीं छप सके थे अब वे भी छपवा दिये हैं।" -स० प्र० भूमिका

अतः सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय संस्करण ही प्रामाणिक होने से मान्य है।

(६) सत्यार्थ प्रकाश की सत्यता

स० प्र० की रचना सन् १८७५ में हुआ था। सैकड़ों वर्षों के बाद भी कोई माई का लाल सत्यार्थ प्रकाश की किसी बात का प्रतिवाद नहीं कर सका है। हाँ, कुछ लोग अपने दिल के गुबार अवश्य निकाले हैं जिनका मुँह तोड़ उत्तर आर्य विद्वानों ने दिया है।

सत्यार्थ प्रकाश के १४वें समुल्लास के विरोध में मौलाना सनाउल्ला ने 'हक प्रकाश' लिखा था जिसका उत्तर पं० चमूपति ने 'चौदहवीं का चाँद' लिखकर दिया। मु० इमामुद्दीन ने 'स० प्र० का असत्यार्थ प्रकाश' लिखा जिसके उत्तर में डा० श्रीराम आर्य ने 'असत्य पर सत्य की विजय' प्रकाशित किया। प्रो० राजेन्द्र कुमार गर्ग (प्रवक्ता दर्शन, मेरठ विश्वविद्यालय) ने 'दयानंद गाली पुराण' लिखकर बकवास किया तो उसके उत्तर में डा० श्रीराम आर्य (कासगंज, एटा, उ. प्र.) ने 'मेरठ का जंगली कुत्ता' लिखा। आगे भविष्य में यदि कोई सत्यार्थ प्रकाश के प्रति कुतर्क करेगा उसे भी मुँह तोड़ उत्तर दिया जायेगा।

देखिए, मजे की बात तो यह है कि सत्यार्थ प्रकाश की सत्यता को स्वीकार करके कितने मुल्ला-पादरी इस्लाम और ईसाइयत को ठोकर मारके वैदिक धर्म की शरण में आ गये हैं जिनमें से कुछ के नाम हैं-

१. डा० आनन्द सुमन (पूर्वनाम डा० रफत अखलाक)

२. डा० अमरेश आर्य (पूर्वनाम श्री शेख अमीर अली)

३. पं० महेन्द्रपाल आर्य (पूर्व इमाम मेरठ, उत्तर प्रदेश)

४. पं० जयप्रकाश आर्य (पूर्व इमाम बेतिया, बिहार)

५. डा० मित्र जीवन (पूर्वनाम डा० नसरुद्दीन कमाल)

ये सभी मुसलमानों एवं ईसाइयों को पुनर्मिलन का सन्देश दे रहे हैं और वैदिक धर्म का प्रचार कर रहे हैं।

(७) सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाएं

१. मानव निर्माण
२. प्रेम और एकता
३. ज्ञान की प्रधानता
४. सदाचार
५. पूर्ण विकास की शिक्षा
६. कर्मफल
७. वर्ण व्यवस्था
८. आश्रम व्यवस्था
९. संस्कार
१०. पंच महायज्ञ
११. भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद का समन्वय

नोट- इनका विवरण मेरी लिखी पुस्तक 'वैदिक धर्म' में पढ़ें।

(८) सत्यार्थ प्रकाश की देन

१. सत्य का प्रकाश
२. वेदों का मार्गदर्शन
३. दार्शनिक देन
४. शैक्षणिक देन
५. धार्मिक देन
६. सामाजिक देन
७. ऐतिहासिक देन
८. राजनैतिक देन

नोट- इनके विवरण के लिए मेरी लिखी निम्न पुस्तकें पढ़ें-

सत्य का योद्धा स्वामी दयानन्द, वेद और दयानन्द, दयानन्द की दार्शनिक मान्यताएँ, दयानन्द की देन, क्रान्ति का अग्रदूत महर्षि दयानन्द।

(९) सत्यार्थ प्रकाश में क्या है

प्रथम समुल्लास में ईश्वर के ओंकारादि नामों की व्याख्या
दूसरे समु० में सन्तानों की शिक्षा
तीसरे समु० में ब्रह्मचर्य, पठन-पाठन विधि आदि
चौथे समु० में विवाह और गृहस्थाश्रम का व्यवहार
पांचवें समु० में वानप्रस्थ और सन्यास की विधि
छठें समु० में राजधर्म
सातवें समु० में वेदेश्वर विषय

आठवां समु० में जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय
नवां समु० में विद्या, अविद्या वन्ध और मोक्ष की व्याख्या
दसवां समु० में आचार विचार और भक्ष्याभक्ष्य विषय
ग्यारहवां समु० में आर्यावर्त्तीय मतमतान्तरों का खंडन
बारहवां समु० में चारवाक, बौद्ध और जैन मत का विषय
तेरहवां समु० में ईसाई मत की समीक्षा
चौदहवां समु० में इस्लाम मत की समीक्षा

और अन्त में आर्यों के सनातन वेद विहित मत की विशेषतः व्याख्या लिखी है।

(१०) सत्यार्थ प्रकाश का जादू

स० प्र० का लाखों व्यक्तियों पर जादू सा प्रभाव पड़ा है। नीचे हम कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं-

१. अमर शहीद पं० शुक्रराज शास्त्री का जन्म कैसे हुआ

पं० शुक्रराज शास्त्री के पिता श्री माधव राव जोशी एक बार किसी वैद्य के यहाँ दवा लेने पोखरा (नेपाल) गये। वहाँ कूड़ा में सत्यार्थ प्रकाश का एक पन्ना मिल गया। उन्हें पन्ना क्या पन्ना मिल गया। उन्होंने वैद्य जी से कहा- "आपके यहाँ आने से मुझे एक नई बीमारी (स०प्र० का पन्ना दिखाते हुए) मिल गई और इस बीमारी की दवा 'सत्यार्थ प्रकाश' पुस्तक है।" वैद्य जी ने कहा- अरे, इस पुस्तक पर तो सरकार ने प्रतिवन्ध लगा दिया है। इसको पढ़ोगे तो जेल के भीतर चले जाओगे।" माधव राव जोशी ने कहा- "परन्तु इससे क्या? बीमारी लग गई तो इलाज जरूरी है।"

सत्यार्थ प्रकाश की खोज में वे काठमाण्डू गये और स० प्र० खरीदे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा तथा अपने पुत्र शुक्रराज शास्त्री को भी पढ़ाया। गुरुकुल सिकन्दराबाद से निकले पर श्री शुक्रराज शास्त्री नेपाल गये और वेद

का प्रचार करने लगे। उस समय नेपाल में राणा शासन था। राणा ने उन्हें कैद कर लिया और फाँसी का दंड दिया।

शुभ चिन्तकों ने शास्त्री जी से क्षमा मांगने के लिए कहा। परन्तु शास्त्री जी ने उत्तर दिया- "मैंने कोई अपराध नहीं किया, इसलिए क्षमा मांगने का प्रश्न ही नहीं उठता।"

उस धर्मवीर का २६ जनवरी सन् १९४१ को रात्रि १२ बजे फाँसी हो गया। धन्य हैं पं० शुक्रराज शास्त्री जी जिन्होंने फाँसी स्वीकार किया लेकिन सत्य के प्रचार से मुख नहीं मोड़ा।

२. अब्दुल्ला गाँधी कैसे हीरालाल गाँधी बने

जब महात्मा गाँधी के सुपुत्र हीरालाल गाँधी इस्लाम मत ग्रहण कर अब्दुल्ला गाँधी बने तो महात्मा गाँधी बड़े दुःखी हुए और माता कस्तूरबा भी बड़ी रो रही थीं।

आर्य समाज के सिपाही अब्दुल्ला गाँधी के पास पहुँचे और उसे तरह-तरह से बहुत समझाए लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में उसे सत्यार्थ प्रकाश दिया गया और उससे यह निवेदन किया गया कि वह स० प्र० एक बार अवश्य पढ़े फिर भले ही मुसलमान बना रहे, कोई बात नहीं।

अब्दुल्ला गाँधी ने सोचा कि इसे पढ़ने में कोई हानि नहीं। इसलिए उसने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। स० प्र० पढ़ने के बाद जैसे जादू हो गया। अब्दुल्ला गाँधी के विचार बदल गये। उसने आर्य समाज को पत्र लिखा- "सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने से मेरा विचार बदल गया है और मैं पुनः हिन्दू बनना चाहता हूँ।" आर्य समाज तो यही चाहता था।

बंबई आर्य समाज ने अब्दुल्ला गाँधी को शुद्ध कर पुनः हीरालाल गाँधी बना दिया। इस प्रकार माता कस्तूरबा को उसका खोया हुआ लाल फिर मिल गया।

३. रफत अखलाक कैसे आनन्द सुमन बने

डा० रफत अखलाक एक मुसलमान थे, कट्टर मुसलमान। वे जमात-ए-इस्लाम के प्रसिद्ध नेता तथा अखिल भारतीय मुस्लिम छात्र आन्दोलन के संस्थापक एवं अध्यक्ष थे।

एक बार जब वे जेल में थे, संयोग से उन्हें सत्यार्थ प्रकाश मिल गया। जिस समय उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ना शुरू किया, १४वाँ समुल्लास में इस्लाम मत का खंडन देखकर उन्हें बड़ा क्रोध आया और उन्होंने निश्चय किया- "जब मैं जेल से बाहर निकलूँगा, तो इसके लेखक को कत्ल कर दूँगा।"

लेकिन ज्यों-ज्यों वे सत्यार्थ प्रकाश पढ़ते गये, उनका क्रोध ठंडा होता गया। और जब वे स० प्र० पूरा पढ़ लिये तो उनके विचार बदल गये।

जब वे जेल से बाहर निकले और घर गये तो अपने पूर्वजों का इतिहास देखा। उन्हें ज्ञात हुआ कि लगभग ढाई सौ वर्ष पूर्व उनके पूर्वज हिन्दू थे।

आपको यह जानकर खुशी होगी कि वे अपने परदादा ठा० बलदेव सिंह द्वारा सन् १७५२ में इस्लाम मत स्वीकार करने का प्रायश्चित करते हुए अपने पूर्वजों के धर्म (वैदिक धर्म) में पुनः आ गये हैं और डा० आनन्द सुमन के नाम से आर्य जगत् में विख्यात हैं।

डा० आनन्द सुमन (पूर्व नाम डा० रफत अखलाक) देश भर में घूम-घूमकर मुसलमान भाइयों को पुनर्मिलन का सन्देश दे रहे हैं।

४. पं० राम प्रसाद बिस्मिल कैसे क्रान्तिकारी बने

अमर शहीद पं० राम प्रसाद बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में लिखा है- "मैंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। इससे तख्ता ही पलट गया।"

बिस्मिल कट्टर आर्य समाजी थे लेकिन उनके पिता पं० मुरलीधर कट्टर सनातनी (पौराणिक) थे। इसलिए पिता को पुत्र का आर्यसमाजी होना बहुत खलता था। एक बार उन्होंने कहा- "राम आर्य समाज छोड़ दो।" बिस्मिल- "पिता जी! यह नहीं हो सकता।" पिता- "तब तुम घर में नहीं रह सकते। निकल जाओ घर से।" बिस्मिल ने पिता के चरण छूकर गृह त्याग दिया।

यह सत्यार्थ प्रकाश का प्रभाव ही है कि बिस्मिल ने घर छोड़ दिया किन्तु आर्य समाज नहीं छोड़ा। इतना ही नहीं, सत्यार्थ प्रकाश ने उन्हें महान् क्रान्तिकारी बना दिया, जिससे वे आजादी की लड़ाई में कूद पड़े और देश को अंग्रेजों से आजाद कराने में शहीद हो गये।

(११) सत्यार्थ प्रकाश के प्रति

विद्वानों, महापुरुषों, क्रान्तिकारियों एवं शहीदों के हृदयोद्‌गार

"सत्यार्थ प्रकाश स्वामी दयानन्द की मार्कतुल आला तस्नीफ (सर्वोत्तम कृति) है।"—मौलाना मुहम्मद अली

"मैंने सत्यार्थ प्रकाश को १४ बार पढ़ा और प्रत्येक बार नये-नये विचार मिलते गये।"—पं० गुरुदत्त विद्यार्थी

"सत्यार्थ प्रकाश की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब की शेखी नहीं बघार सकता। यदि स्वामी दयानन्द अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में 'स्वराज्य' शब्द न लिखे होते तो आज स्वराज की पुकार सुनाई भी नहीं देती।"
—स्वातंत्र्य वीर सावरकर

"मुझे स्वराज्य समर में स्वामी दयानन्द के ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश से बड़ी प्रेरणा मिलती है।"—दादा भाई नौरोजी

"मैंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा। इससे तख्ता ही पलट गया। सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में एक नवीन पृष्ट खोल दिया।"

-अमर शहीद पं० राम प्रसाद बिस्मिल

"सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने न जाने कितने व्यक्तियों की काया पलट की होगी।"

-स्वामी श्रद्धानन्द

"सत्यार्थ प्रकाश अंधकार को दूर करता है।"

-कांग्रेस के संस्थापक मि० ह्यूम

"सत्यार्थप्रकाश मेरे जीवन में प्रकाश देने वाले सूर्य के समान है।"

-पंजाब केसरी ला० लाजपतराय

"सत्यार्थ प्रकाश एक महान् प्रकाश स्तम्भ है।"

-डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी

"सत्यार्थ प्रकाश भटकने वालों के लिए पथप्रदर्शक (Guide) है।"

-दीनबन्धु एण्ड्रूज

"सत्यार्थ प्रकाश भारत को ही नहीं सम्पूर्ण विश्व को प्रत्येक युग में प्रेरणा देता रहेगा।"

-स्वामी सत्य प्रकाश

'रामकृष्ण' वेद का सुराह दिखाई न देता।

यदि ऋषि का सत्यार्थ प्रकाश नहीं होता।।

१२. उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि सत्यार्थ प्रकाश एक महान् क्रान्तिकारी ग्रंथ है। यह ग्रंथ बड़ा महत्वपूर्ण और मानव समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी है। प्रत्येक मनुष्य को इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। यदि हम यह कहें कि 'जिसने सत्यार्थ प्रकाश नहीं पढ़ा, उसका मानव जीवन व्यर्थ है, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगा।

कवि ने ठीक ही लिखा है-

सत्यार्थ प्रकाश पढ़ो, निश्चित उपकार होगा।
भ्रमभूत भागेंगे, जीवन में चमत्कार होगा।।
सुख-शान्ति मिलेगा, बनेंगे बिगड़े कार्य।
समस्याएँ हल होंगी, **रामकृष्ण आर्य**।।

।। शमित्योम् ।।

सत्यार्थ प्रकाश सा देखा न सुना [कौआली]

यूँ तो सद्ग्रंथ कितने हैं दुनियां में।
कोई सत्यार्थ प्रकाश सा देखा न सुना।।टेक।।

ग्रंथ यह सबसे महान, ऋषि दयानन्द का।
पोल खोलता है जो, पाखण्ड-छल-दम्भ का ।।
यह दिल में ऐसी, ज्योति जलाता है ।
अज्ञान-अन्धकार-भ्रम सारा मिट जाता है ।
ज्ञान यह कराता है, झूठ और साँच का ।
पहचान हो जाता है, हीरा और काँचका ।।
ब्रह्मा से लेके जैमिनी, पर्यन्त ऋषियों का ।
इसमें सिद्धान्त है, सार्वभौम ऋषियों का ।।
भाई-बहनों! सुनो, यह ग्रंथ अनमोल है ।
धूर्तों के लिए १४ गोली की पिस्तोल है।।१।।यूँ तो

इसे पढ़ने से, वेद का सुराह मिलता है ।
मत और पन्थों में, देखो आग लगता है ।।
इसे पढ़ने से, हल होती हैं समस्याएँ ।
चरण चूमती हैं, संसार में सफलताएँ ।।
इसे पढ़ने से, सारा दुःख मिट जाता है ।।
आनंद ही आनंद, दुनिया में आता है ।।
इसे पढ़ने से, मुर्दा भी उठ जाता है ।
गूँगा भी शान से, वेद-मंत्र गाता है ।।
इसकी महिमा के गीत सभी लोग गाते हैं।
चाँद-सूरज-सितारे भी, शीश को झुकाते हैं ।।२।। यूँ तो

गीत इसके, जीवन भर श्रद्धा से गाएँ हम।
जन-जन तक, प्रकाश इसका पहुँचाएँ हम।।
इसके प्रचार में, सर्वस्व निज लुटाएँ हम।
बार-बार जन्म लें और बलि जाएँ हम।।
जब तक रहे ये धरती, रहे ये आकाश ।
'रामकृष्ण' अमर रहे, सत्यार्थ— प्रकाश।।३।। यूँ तो

खुश खबरी! ४० रुपये में ४० पुस्तकें!! और वाह!!!

डा० रामकृष्ण आर्य द्वारा लिखित क्रान्तिकारी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
एक ही रास्ता 'वैदिक धर्म'	२.००	वेद : क्या? क्यों? कैसे?	२.००
वेद और दयानन्द	१.००	वैदिक सूक्ति चालीसा	०.५०
गायत्री मंत्र : व्याख्या	२.००	ईश्वर : क्या? क्यों? कैसे?	१.००
ईश्वर अवतार नहीं लेता	०.५०	ईश्वरभक्ति बनाम मूर्तिपूजा	१.००
मूर्तिपूजा : क्या? क्यों? कैसे?	२.००	मूर्तिपूजा से हानियाँ	०.५०
मूर्तिपूजा : नरकधाम का महापथ	०.५०	मूर्तिपूजा का अन्त	१.००
फलितज्योतिष अंधविश्वास है	१.००	पितृयज्ञ बनाम मृतकश्राद्ध	१.००
अमर शहीद	१.००	स्वामी दयानन्द सरस्वती	३.००
दयानन्द की देन	३.००	दयानन्द की दार्शनिक मान्यताएँ	२.००
क्रांति के अग्रदूत : महर्षि दयानन्द	१.००	सत्य के योद्धा : स्वामी दयानन्द	१.००
सत्यार्थ प्रकाश दर्पण	२.००	ढोल की पोल	५.००
गीता सत्य की कसौटी पर	४.००	राम और कृष्ण	२.००
मानवता का मसीहा : देव दयानन्द	०.५०	आर्यसमाज से मिलकर चलो	१.००
आर्यसमाज और राजनीति	१.००	गीता का चक्रव्यूह	१.००
द्रौपदी के ५ पति नहीं थे	१.००	मांस खाने से हानियाँ	१.००
मृतक श्राद्ध पाखंड है	१.००	शंका-समाधान	२.००
पुराणों का पोलखाता	३.००	बौद्धमत या बुद्धूमत	१.००
ईसाई मत का खण्डन	०.५०	इस्लाम मत की समीक्षा	१.००
आर्यसमाज का चैलेञ्ज	१.००	पुराण शास्त्रार्थ के आइने में	१.००
असत्य पर सत्य की विजय	१.००	दयानन्द दिग्विजय	३.००
वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-१)	१६.००	वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-२)	१६.००
वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-३)	१६.००	वैदिक ग्रन्थमाला (सम्पूर्ण)	४०.००

गीतों की पुस्तकें—

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
वैदिक गीतमाला	१६.००	वैदिक गीतांजलि	१६.००
वैदिक गीत चालीसा	६.००		

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प २२

ढोल की पोल

★

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१
सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६
कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी प्रथमं संस्करण : १०००
नवम्बर सन् १९९५ ई० मूल्य : ५ रुपये

दो शब्द

गो० तुलसीदास जी ने छोटे-बड़े अनेकों काव्य ग्रंथों की रचना की है, जिनमें 'रामचरित मानस' मुख्य है। मानस तुलसीदास जी का सबसे बड़ा ग्रंथ है। यह ग्रंथ समाज में तुलसी रामायण के नाम से प्रसिद्ध है। तु० रामायण का हिन्दू समाज में बहुत बड़ा स्थान है। हिन्दू लोग इसका बड़ा आदर करते हैं। इसका अखंड पाठ गाँवों में प्रायः होता रहता है।

एक बात है तु० रामायण का ढोल प्रायः सब लोग पीटते हैं लेकिन इस ढोल में क्या पोल है? इसे सब लोग नहीं जानते हैं। केवल सत्य का जिज्ञासु ही इस ढोल की पोल को समझ पाता है, हठी और दुराग्रही नहीं। अन्ध भक्त लोग तो आँख मूंदकर उसका धुँआधार पाठ करना ही जानते हैं, उन्हें सच्चाई से कोई मतलब नहीं होता है।

नीर-क्षीर विवेकी परमहंस महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने तु० रामायण को अपाठ्य घोषित किया है। देखो- सत्यार्थ प्रकाश, समु०३

जब मैंने तु० रामायण का गहराई से अध्ययन किया तो देखा कि वास्तव में तु० रामायण का पोथा तो थोथा है। तुलसी का पोथा व्यक्ति, समाज और देश के लिए बड़ा खतरनाक है इससे बहुत बड़ा अनिष्ट हुआ है और हो रहा है।

निःसन्देह तु० रामायण में कुछ तथ्यपूर्ण बातें भी हैं परन्तु वे **'विष सम्पृक्त अन्नवत्'** त्याज्य हैं। क्योंकि यदि जनता तु० रामायण को पढ़ेगी तो उस पर कुप्रभाव अवश्य पड़ेगा। क्या आप नहीं देखते हैं कि बड़े-बड़े विद्वान पढ़े-लिखे डाक्टर, वकील, इंजिनीयर तु० रामायाण के जाल में फँसकर वेद के सन्मार्ग से भटके हुए हैं।

तु० रामायण को आधार मानकर रामानन्द सागर ने अपने 'रामायण सीरियल' में विकृत इतिहास ही दिखाया है।

प्रस्तुत ग्रंथ में मैंने तु० रामायण की विवेचना करके उसके ढोल की पोल खोलके रख दिया है। इस ग्रंथ में प्रमाणों की पृष्ठ संख्या श्री रामचरित

मानस, मझला साइज, २३वाँ संस्करण, संवत् २०४० वि०, गीता प्रेस गोरखपुर के अनुसार दिया गया है। इसको देखने से तु० रामायण की वस्तुस्थिति का सरलता से सही-सही पता चलेगा, जिससे कोई तु० रामायण के जाल में नहीं फँसेगा और जो उसके जाल में फँसकर पथभ्रष्ट हैं उनको वेद का सन्मार्ग मिलेगा। इससे संसार का कल्याण होगा। इसी आशा और विश्वास के साथ

काशी शास्त्रार्थ दिवस कार्तिक सुदी १२ संवत् २०४८ वि० — डा० रामकृष्ण आर्य

अनुक्रमणिका

अध्याय १

तुलसी रामायण वेद-विरुद्ध

यद्यपि तुलसीदास ने वेद की भूरि-भूरि प्रशंसा की है और अपने रामायण के आरम्भ में वेद की वंदना भी की है-

वंदउँ चारिउ वेद, भव वारिधि वोहित सरिस। (वालकांड, पृष्ठ ४७)

इतना ही नहीं, तुलसीदास ने वेद विरोधियों को बुरी तरह लताड़ा है और उनको घोर नरक में जाने वाला वताया है-

अग्य अकोविद अंध अभागी। काई विषय मुकुर मन लागी ।।
लंपट कपटी कुटिल विसेषी। सपनेहुँ सन्त सभा नहिं देखी ।।
कहहिं ते वेद असंमत वानी । (बाल काण्ड, पृ. १३२)
सुर श्रुति निन्दक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी ।।
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका।।
(उत्तर कांड, पृ. ९९०।९९०)

लेकिन यह भी सत्य है कि तुलसी दास ने वेद की घोर निन्दा की है। उन्होंने वेद विरुद्ध वहुत सी वातें लिखी हैं। प्रस्तुत हैं तुलसी रामायण की वेद विरुद्ध कतिपय बातें—

(१) मूर्तिपूजा-

लिंग थापि विधिवत करि पूजा। (लंका कांड, पृ. ७४१)
मोर मनोरथु जानहु नीकें। वसहु सदा उरपुर सबही कें।।
(वालकाण्ड, पृ. २२८)

अर्थात् राम और सीता मूर्तिपूजा करते थे।

समीक्षा- राम के समय में मूर्तिपूजा का नामो निशान भी नहीं था। क्योंकि महर्षि दयानंद ने लिखा है- "यह मूर्तिपूजा अढ़ाई तीन सहस्र वर्ष से इधर उधर जैनियों से चली है।" (सत्यार्थ प्रकाश, समु ११)

और राम तो वेद को मानते थे। तुलसीदास ने लिखा है-

वरनाश्रम निज निज धरम, निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि, नहिं भय सोक न रोग ।।

(उत्तर काण्ड, पृ. ८६१)

और वेद में लिखा है- ओऽम् क्रतो स्मर। (यजु. ४०।१५)
अर्थात् ओऽम् का स्मरण करो। वेद में तो मूर्तिपूजा का निषेध हैः-
अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये सम्भूतिमुपासते। (यजु. ४०।९)
अर्थात् जो मूर्ति की उपासना करते हैं वे घोर अंधकार में हैं।
अतः राम मूर्तिपूजा नहीं करते थे। राम सन्ध्या करते थे-
पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुबर संध्या करन सिधाए।।(अयो० [illegible])
सीताजी भी सन्ध्या करती थी-

सन्ध्याकाल मनाः श्यामा, ध्रुवमेष्यति जानकी ।
नदीं चेमां शुभ जलां, सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी ।।

(वा० रा० सुन्दरकाण्ड १४।४९

अर्थात् हनुमान जी सोचते हैं "यदि सीता अशोक वाटिका में होंगी तो प्रातःकाल की सन्ध्या के लिए नदी के इस सुन्दर तट पर अवश्य आयेंगी।"

(२) अवतारवाद

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
तब तब प्रभु धरि विविध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

(बालकांड, पृ. १३८)

मीन कमठ सूकर नरहरी। बामन परसुराम वपु धरी।।

(लंकाकांड, पृ. ८५१)

अर्थात् ईश्वर अवतार लेता है और मछली, कछुआ, सूअर आदि का शरीर धारण करता है।

समीक्षा- अवतारवाद वेद विरुद्ध है। देखो! वेद कहता है-

ओऽम् खं ब्रह्म। (यजु. ४०।१७) अर्थात् ईश्वर सर्वव्यापक है।

स पर्यगाच्छुक्रमकायम्। (यजु० ४०।८) वह शरीर रहित है।

न तस्य प्रतिमास्ति। (यजु० ३२।३) उसकी मूर्ति नहीं है।

प्रश्न है जब ईश्वर शरीर रहित है तो अवतार कैसे लेगा? अवतारवाद का खंडन करते हुए स्वयं तुलसीदास ने लिखा है-

कर विनु करम करइ विधि नाना।।

अरे हाँ, एक मजेदार बात है। तुलसी ने अपने अवतारवाद की हँसी भी उड़ाई है। उन्होंने लिखा है। ईश्वर मछली, कछुआ, सूअर आदि का शरीर धारण करता है। मैं पूछता हूँ क्या मछली आदि जन्तु राक्षसों का नाश और सज्जनों की रक्षा करेंगे? मछली और कछुआ जल के कीड़ों को खाकर जल को साफ करेंगे तथा सूअर मनुष्य का पाखाना (टट्टी) को खाकर थल को साफ करेंगे। इसके सिवा वे कुछ नहीं कर सकते।

(३) भाग्यवाद

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। (बालकाण्ड, पृ. ८२)

अर्थात् जो राम (तुलसी के ईश्वर) करेंगे, वही होगा।

समीक्षाः- यदि ऐसी बात है तो पुरुषार्थ (परिश्रम) करने की क्या आवश्यकता? हाथ पर हाथ धरे बैठे रहो, सब काम हो जायेगा। किस बात की चिन्ता? सावधान! परिश्रम करो, तभी सफलता मिलेगी क्योंकि कहावत है- 'काम नहीं, दाम नहीं।' तुलसीदास भी मानते है- 'कर्म प्रधान विश्व करि राखा।'

भाग्यवाद वेद-विरुद्ध है। वेद में कहा है—

कृतं में दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः। (अथर्व ७।५०।८)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। (यजु० ४०।२)

अर्थात् कर्म करो, सफलता मिलेगी। जब तक जियो, कर्म करते हुए जियो।

(४) पापों के फल से मुक्ति

तुलसीदास लिखते हैं-

जपतु अजामिल गज गनिकाऊ। भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ।।
भाव कुभाव अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ ।।

(बालकाण्ड, पृ. ५८, ५६)

जेहिं अघ बधेउ ब्याध जिमि बाली। फिर सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली।।
सोइ करतूति विभीषन केरी। सपनेहुँ सो न राम हियँ हेरी।।

(बालकाण्ड, पृ. ६१)

अर्थात् 'राम' नाम जपने से पाप कट जाता है और मुक्ति मिल जाती है।

समीक्षाः- आर्य विद्वान् श्री ईश्वरीय प्रसाद 'प्रेम' ने लिखा है- "इसी अंधविश्वास के कारण ही समाज में अधिकांश लोग संसार का पाप बटोरकर भी मुक्ति चाहते हैं और 'राम' नाम जपते हैं। **'मुख में राम,बगल में छुरी'** तथा 'भगत जगत को ठगत है' की व्यंगोक्तियां इसीलिए प्रसिद्ध हैं।"

(रामचरितमानस सत्य की कसौटी पर)

इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसीदास पापों से बचने की प्रेरणा नहीं देते बल्कि पापों के फल से बचने की प्रेरणा देते हैं। दूसरे शब्दों में तुलसीदास पाप करने का प्रोत्साहन देते हैं। यही कारण है कि आज देश और समाज में अंधभक्ति की वृद्धि के साथ-साथ पाप दिन दूना, रात चौगुना बढ़ रहा है।

लेकिन, सावधान!
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
अर्थात् कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ेगा।
पक्तारं पक्वः पुनरा विशाति। वेद
अर्थात् जैसी करनी, वैसी भरनी।
इसलिए हमेशा सत्कर्म करो। भूलकर भी पाप मत करो।

(५) जातिवाद

पूजिअ विप्र सील गुनहीना। सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना ।

(अरण्य कांड, पृ० ६३८)

आभीर जमन किरात खस, स्वपचादि अति अघरूप जे।

(उत्तर काण्ड. पृ. १०००)

अर्थात् सभी गुणों से हीन ब्राह्मण पूज्य है, लेकिन सभी गुणों से युक्त शूद्र पूज्य नहीं है। अहीर आदि पाप रूप हैं।

समीक्षाः- यह गलत बात है। गुणों की पूजा सर्वत्र होती है और होनी चाहिए, तभी देश और समाज उन्नति कर सकता है।

गुणहीन को पूज्य तथा गुणवान को अपूज्य बताना देशद्रोह और समाज विरुद्ध है। तुलसीदास ने गुणहीन ब्राह्मणों की पूजा क्यों लिखा है? इसलिए कि तुलसी भी ब्राह्मण थे उनकी भी लोग पूजा करें, चाहे उनमें लाख अवगुण हों।

अहीर आदि को पापरूप लिखना उनके साथ घोर अन्याय है।

जातिवाद वेद विरुद्ध है। वेद में लिखा है-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥ *(यजु. ३१/११)*

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र राष्ट्र रूपी शरीर के क्रमशः शिर, बाहु, पेट तथा पैर हैं। अतः इनका अस्तित्व अति आवश्यक है। बिना इनके राष्ट्र जीवित नहीं रह सकता। यही वर्ण व्यवस्था है और वर्णव्यवस्था का आधार गुण-कर्म-स्वभाव है, किसी की बपौती नहीं।

महर्षि मनु ने लिखा है-

शूद्रो ब्राह्मणतामेति, ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम्।
क्षत्रियात् जातमेवन्तु, विद्यात् वैश्यात्तथैव च।। *(मनु. १०/६५)*

जो शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण-कर्म-स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाय। वैसे ही जो ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य कुल में उत्पन्न होके शूद्र के समान गुण कर्म-स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र हो जाय। इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य के विषय में भी जान लेना।

(६) नारी निन्दा

सहज अपावनि नारि। (अरण्यकाण्ड, *पृ. ६०२)*

अधम से अधम, अधम अति नारी। *(अरण्य कांड,पृ.६३६)*

अवगुन मूल सूलप्रद, प्रमदा सब दुख खानि। *(अरण्य काण्ड, पृ. ६४६)*

अवगुन आठ सदा उर रहहीं। *(लंका काण्ड, पृ. ७५३)*

अर्थात् नारी स्वभाव से अपवित्र होती है। नारी महानीच होती है। नारी अवगुणों की मूल तथा सभी दुःखों की खान है। नारी में ८ अवगुण होते हैं।

समीक्षा- तुलसी ने नारी की घोर निन्दा की हैं। यह तुलसी का नारी के प्रति बहुत बड़ा अन्याय है। अरे, नारी (तुलसी की पत्नी) ने तुलसी से कहा-

अस्थि चर्म मम देह मम, तामे ऐसी प्रीति ।
तैसी जो श्रीराम में, होत न तव भव भीति ।।

यह बात तुलसी को लग गई और वे तुलसीदास बन गये। मैं पूछता हूँ नारी ने तुलसी को पैदा किया और नारी ने तुलसी को शिक्षा दिया, इसलिए तुलसी का नारी-निन्दा क्या कृतघ्नता नहीं है?

मनु महाराज ने कहा है- यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

अर्थात् जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवताओं का वास होता है।

नारी देवी होती है। नारी लक्ष्मी होती है। नारी गृहस्वामिनी होती है। नारी मातृ शक्ति होती है। माता निर्मात्ता भवति। माता बच्चे का निर्माण करती है। मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषोवेद। माता बच्चे का प्रथम गुरु होती है।

किसी कवि ने ठीक ही कहा है-

नारी निन्दा मत करो, नारी गुण की खान।
नारी से नर उपजे, राम–कृष्ण–हनुमान।।

(७) अशिष्टाचार

गौतम नारि श्राप बस, उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति, कृपा करहु रघुबीर ।। (बालकाण्ड पृ.२०८)

अर्थात् राम ने अहिल्या को अपना चरण स्पर्श कराया।

समीक्षाः अहिल्या गौतम मुनि की पत्नी थी और पूज्या थी। होना तो यह चाहिए था कि राम गौतम मुनि के पैर छूने के साथ ही अहिल्या का पैर छूते तथा आशीर्वाद लेते और यही शिष्टाचार है। लेकिन राम ने उलटे अहिल्या को अपना पैर छुवाया जो कि मर्यादा का उल्लंघन है। अतः सिद्ध है कि तुलसी ने राम पर अशिष्टाचार का आरोप लगाकर उनकी मर्यादा पर कीचड़ उछाला है।

(८) अन्ध विश्वास

(क) तर्क न करना

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। (बालकाण्ड, पृ. १३८)

समीक्षाः- तर्क क्यों न करें? तर्क द्वारा तो ईश्वर को भी जाना जाता है, जो कि निराकार है और राम तो ऐतिहासिक पुरुष (साकार) थे।

देखिये, मनुष्य कौन है? **मत्वा कर्माणि सीव्यति।** (निरुक्त) अर्थात् मनुष्य वह है जो विचार के कार्य करे, जो तर्क द्वारा अच्छी तरह समझ ले कि यह कार्य करें या न करें। और शास्त्र कहता है-

यस्तर्केण अनुसन्धन्ते स धर्म वेद नेतरः।

अर्थात् जो तर्क द्वारा अनुसंधान करते हैं वही धर्म को जानते हैं, अन्य नहीं।

(ख) अंधानुकरण

गर पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।।
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू ।।

(अयोध्याकाण्ड पृ. ४७४)

समीक्षाः अंधानुकरण के कारण ही तो 'नक कटा सम्प्रदाय' चल गया था। (सत्यार्थ प्रकाश, समु. ११)

हमें अन्धानुकरण नहीं करना चाहिए। इसीलिए गुरु उपदेश देता है-

यानि यानि सुचरितानि तानि त्वयो उपास्यानि नो इतराणि ।

अर्थात् सद्गुणों का अनुकरण करो, दुर्गुणों का नहीं।

(ग) शकुन-अपशकुन

मंगल सगुन होहिं सब काहू। फरकहिं सुखद विलोचन बाहू।।
एतना कहत छींक भइ बाँए। कहेउ सगुनिअन्ह खेत सुहाए।।

(अयोध्याकाण्ड, पृ. ५१२, ४८५)

समीक्षा- आँख फड़कना, दिल धड़कना, छींक आना आदि शरीर की स्वाभाविक क्रियाएं हैं। इनसे किसी कार्य की सफलता या असफलता से कोई सम्बन्ध नहीं है।

नोटः- इसप्रकार हम देखते हैं कि तुलसी ने वेद विरुद्ध बातें लिखकर समाज को पथ-भ्रष्ट किया है। इसीलिए हम कहते हैं कि तुलसीदास जी समाज के पथभ्रष्टक थे। तुलसी रामायण तुलसी के लिए सुखदायक 'स्वान्तः सुखाय' (बालकाण्ड, पृ.३०) भले ही रहा हो, परन्तु यह समाज के लिए दुःखदायक ही रहा है।

अध्याय २

अवतारवाद

'अवतार' शब्द 'अव' उपसर्ग पूर्वक 'तृ' धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है उतरना। और वही उतर सकता है जो ऊपर हो, नीचे न हो। लेकिन ईश्वर ऊपर, नीचे, आगे, पीछे, दायें, बायें, अत्र-तत्र-सर्वत्र मौजूद है, इसलिए ईश्वर का अवतार नहीं हो सकता।

मनु महाराज ने लिखा है- प्रमाणं परमं श्रुतिः।(मनु.२।१३)

अर्थात् वेद परम प्रमाण है। वेद से बड़ा कोई प्रमाण नहीं।

और वेद कहता है-

ओऽम् खं ब्रह्म। (य० ४०।१७)

स पर्यगाच्छुक्रमकायम्। (य० ४०।८)

न तस्य प्रतिमास्ति। (य० ३२।३)

अर्थात् ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, शरीर रहित और निराकार है, उसकी कोई मूर्ति नहीं है।

अतः सिद्ध है कि अवतारवाद वेद विरुद्ध है। अवतारवाद के खंडन में अन्य सच्छास्त्रों के प्रमाण भी दिये जा सकते हैं। इतना ही नहीं, स्वयं तुलसीदास ने भी स्वीकार किया है कि ईश्वर सर्वव्यापक, निराकार और सर्वशक्तिमान् है। तुलसी दास जी लिखते हैं-

हरि व्यापक सर्वत्र समाना। *(बालकाण्ड, पृ. १८७)*

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।।

* जब कि राम ईश्वर नहीं थ। राम मनुष्य थे। वह महापुरुष थे।

(वालकाण्ड. पृ. १३५)

लेकिन तुलसीदास को अवतारवाद से इनकार नहीं। वावा तुलसी अवतारवाद की कल्पना करते हुए कहते हैं-

जव जव होइ धरम कै हानी। वाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।
तव तव प्रभु धरि विविध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

(वालकाण्ड. पृ: १३८)

अर्थात् ईश्वर अवतार लेता है और विविध शरीर धारण करता है।

मीन कमठ सूकर नरहरी। वामन परसुराम वपु धरी।।

(लंका काण्ड पृ. ८५१)

अवतारवाद तुलसी वावा का दुराग्रह है। इसीलिए वे राम को ईश्वर वताते हैं-

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। *(वालकाण्ड पृ. १३३)*
जेहि इमि गावहिं वेद वुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान ।
सोइ दसरथ सुत भगत हित, कोसलपति भगवान ।।

(वालकाण्ड. पृ. १३५)

अवतारवाद के समर्थन में तुलसी वावा अनेकों कथाएँ अपने रामायण की शुरुआत में दिये हैं-

(१) वृन्दा का शाप

परम सती असुराधिप नारी। तेहिं वल ताहि न जितहिं पुरारी।।
छल करि टारेउ तासु व्रत, प्रभु सुरकारज कीन्ह।
जव तेहिं जानेउ मरम तव, श्राप कोप करि दीन्ह।।
तहाँ जलन्धर रावन भयऊ। रन हति राम परम पद दयऊ।।

(वालकाण्ड. पृ. १३९ व १४०)

समीक्षा : तुलसीवावा ने लिखा है कि भगवान् विष्णु ने सती वृन्दा का शील भंग किया तो विष्णु को वृन्दा ने शाप दिया, जिससे विष्णु को राम का जन्म मिला। मैं पूछता हूँ कि मारना था एक दुष्ट को, क्यों एक पतिव्रता का शील भंग किया? क्या पराई स्त्री से मुँह काला करने से भगवान् विष्णु के

वड़प्पन में चार चाँद लग गया? क्या विष्णु के भगवान होने की यही कसौटी है? ऐसे विष्णु को भगवान नहीं शैतान मानना चाहिए। ऐसे दुष्ट विष्णु को राम का नहीं रावण का जन्म मिलना चाहिए।

(२) नारद का शाप

कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।।

(बालकाण्ड, पृ. १६०)

समीक्षा : विष्णु ने नारद को बन्दर का मुख दे दिया। नारद ने उन्हें श्राप दिया कि बन्दर ही तुम्हारी सहायता करेंगे। मैं पूछता हूँ कि विष्णु के अवतार थे नारद। विष्णु ने अपने ही अवतार (नारद) के साथ छल क्यों किया? और बन्दर भेष से तो नारद जी छले गये थे, उन्होंने ऐसा श्राप क्यों दिया जो राम (विष्णु के अवतार) के लिए सहायक हो गया? क्या नारद जी मूर्ख थे? अरे, यह तो वरदान हुआ, न कि अभिशाप।

(३) मनु को वरदान

आपु सरिस खोजौं कहँ जाई। नृप तव तनय होब मैं भाई।।

(बालकाण्ड, पृ. १६०)

समीक्षा : मनु ने घोर तप किया और ईश्वर से वरदान माँगा कि तुम मेरे पुत्र बनो। भगवान ने कहा 'तथास्तु।' प्रश्न है क्या इसीलिए मनु ने घोर तप किया था? क्या इससे उन्हें मुक्ति मिल गई? इससे उनका क्या आध्यात्मिक विकास हुआ?

इस प्रकार उपरोक्त कथाएँ मन घड़न्त, असंगत, बुद्धि विरुद्ध एवं विज्ञान विरुद्ध हैं। ये कथाएँ हास्यास्पद ही नहीं पापवर्द्धक भी हैं। तुलसीदास स्वयं इन कथाओं की हँसी उड़ाते हैं-

राम जनम के हेतु अनेका। परम विचित्र एक तें एका।।

(बालकाण्ड, पृ. १३८)

अवतारवाद के दुराग्रह के कारण तुलसीदास उन्हें (राम को) ईश्वर कहते नहीं थकते*। वे एक ही बात बार-बार दुहराते हैं कि राम मनुष्य नहीं ईश्वर

*जब कि राम ईश्वर नहीं थे। राम मनुष्य थे। वह महापुरुष थे।

थे। उनके रामायण में आदि से अन्त तक यही कुचक्र चलता रहता है।

देखिए! एक बात तुलसीदास अच्छी तरह जानते थे कि राम ईश्वर नहीं, मनुष्य थे। 'राम ईश्वर थे' उनकी इस बात पर लोग तर्क करेंगे, यह बात तर्क की कसौटी पर खरा नहीं उतरेगा और अपनी खोट बोल देगा। इस प्रकार उनके अवतारवाद का महल ही ढह जायेगा। इसलिए तुलसीदास को तर्क से बड़ा डर था और उन्होंने लोगों की बुद्धि पर ताला लगा दिया।

उन्होंने कहा—राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। (बालकाण्ड, पृ. १३८)

दूसरी बात यह भी है कि तुलसीदास यह भली प्रकार जानते थे कि तर्क द्वारा झूठ को साँच कभी नहीं सिद्ध किया जा सकता है, परन्तु दुराग्रह पूर्वक मिथ्या विश्वास उत्पन्न किया जा सकता है। यहाँ एक दृष्टान्त देना उपयुक्त होगा।

दृष्टान्त : एक ब्राह्मण था। किसी यजमान ने गऊदान में उसे बछिया दे दिया। ब्राह्मण उसे कंधे पर उठाकर घर की ओर चल पड़ा। ७ ठगों का एक गिरोह उसे देख लिया। ठगों ने ब्राह्मण की बछिया ठगने का निश्चय किया। सातो ठग ब्राह्मण से आगे निकलकर रास्ते में थोड़ी-थोड़ी दूर पर खड़े हो गये। जब वह पहले ठग के पास से गुजरा तो उसने विस्मय की मुद्रा में कहा- "अरे भाई, यह क्या? तुमने कंधे पर कुतिया क्यों बैठा रखा है?" ब्राह्मण ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया।

कुछ दूर चलने पर दूसरा ठग मिला। और उसने भी वही बात कही। परन्तु ब्राह्मण ने विश्वास नहीं किया और अपने रास्ते पर चलता रहा। कुछ दूर और आगे चलने पर तीसरा ठग मिला और उसने भी वही बात दुहरायी। अब ब्राह्मण के दिमाग में संदेह की एक रेखा खिंच गई। उसने सोचा कि उसके साथ धोखा तो नहीं हुआ है। हो सकता है यजमान ने मजाक में बछिया के बदले कुतिया दे दिया हो। उसने कंधे से बछिया उतारकर देखा तो बोला- "अरे, कौन कहता है कि यह कुतिया है? यह बछिया है बछिया।" और फिर बछिया को कंधे पर रखकर ब्राह्मण चलने लगा। कुछ दूर चलने पर चौथा ठग मिला और हँसकर कहा- "अरे! तुम कैसे बुद्धू ब्राह्मण हो, जो कंधे

पर कुतिया लादे जा रहे हो?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया- "तू मुझे बुद्धू बनाता है, आंख खोलकर देख बछिया है बछिया।" परन्तु जब ५वें ठग ने वही बात कही तो उसे अपने पर अविश्वास होने लगा और जब ६ वें ठग ने वही बात दुहराई तो उसका अविश्वास और दृढ़ हो गया और जब ७वें ठग ने कहा- "छी! छी!! तुम ब्राह्मण होकर कंधे पर कुतिया लादे जा रहा है?"

तब उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि यह कुतिया है, बछिया नहीं। उसने सोचा कि एक व्यक्ति झूठ बोल सकता है, दो व्यक्ति झूठ बोल सकते हैं लेकिन सभी व्यक्ति झूठ नहीं बोल सकते। अतः उसने बछिया को कुतिया समझकर छोड़ दिया, जिसे ठगों ने पकड़ लिया।

देखिए! जिस प्रकार ठग लोग ब्राह्मण को तर्क द्वारा यह नहीं समझा सकते थे कि उसके कंधे पर कुतिया है, बछिया नहीं। लेकिन दुराग्रह पूर्वक मिथ्या विश्वास उत्पन्न करा दिया कि उसके कंधे पर कुतिया है, बछिया नहीं। उसी प्रकार तुलसीदास तर्क द्वारा यह कदापि नहीं सिद्ध कर सकते थे कि राम ईश्वर थे, मनुष्य नहीं। किन्तु दुराग्रह पूर्वक मिथ्या विश्वास उत्पन्न करा दिया कि राम ईश्वर थे, मनुष्य नहीं।

इसके लिए तुलसीदास ने अपने रामायण में विभिन्न पात्रों को ठगों के रूप में प्रस्तुत किया है-

(१) कौशल्या-

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी, केहि बिधि करौं अनन्ता।
माया गुन ज्ञानातीत अमाना, बेद पुरान भनन्ता।।

(बालकाण्ड, पृ. १९३)

(२) दशरथ-

जाकर नाम सुनत सुभ होई। मोरे गृह आवा प्रभु सोई।।

(बालकाण्ड, पृ. १९४)

(३) विश्वामित्र-

ग्यान बिराग सकल गुन अयना। सो प्रभु मैं देखब भरि नयना।।

(बालकाण्ड, पृ. २०४)

(४) वशिष्ठ-

सुनु नृप जासु विमुख पछिताहीं। जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं।
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी। राम पुनीत प्रेम अनुगामी।।

(अयोध्याकाण्ड. पृ. ३३६)

(५) रावण—

खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।।

(अरण्यकाण्ड. पृ. ६२५)

(६) लक्ष्मण—

भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई। सपनेहुँ संकट परइ कि सोई।।

(अरण्य काण्ड. पृ. ६३०)

(७) हनुमान-

जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।।

(सुन्दरकाण्ड. पृ. ७०४)

इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसीदास ने राम को ईश्वर का अवतार सिद्ध करने के लिए एड़ी से चोटी तक जोर लगा दिया। परन्तु एक कहावत है-

सच्चाई छुप नहीं सकती, बनावट के उसूलों से ।
कि खुशबू आ नहीं सकता, कभी कागज के फूलों से ।।

और तु० रामायण में अनेकों स्थलों पर यह सच्चाई 'राम ईश्वर नहीं, मनुष्य थे' अवतारवाद के घटाटोपों को चीरकर बिजली की भाँति दिखाई देती है। देखिये—

(i) राम का जन्म

जा दिन तें हरि गर्भहिं आए। (बालकाण्ड, पृ. १९१)
दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। (बालकाण्ड, पृ. १९४)

समीक्षा- राम गर्भ में आये थे और उनका जन्म हुआ था जबकि ईश्वर अजन्मा (अजः-ऋग्वेद) और शरीर रहित (अकायम्-यजुर्वेद) है।

(ii) राम का शिष्टाचार

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मागि करहिं पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा।।

(बालकांड, पृ० २०३)

समीक्षा- यदि राम ईश्वर होते तो कौशल्या, दशरथ और वशिष्ठ को अभिवादन क्यों करते? और वे लोग राम से पैर पकड़वाने का दुस्साहस क्यों करते?

(iii) राम की ईश्वर-भक्ति

विगत दिवसु गुरु आयसु पाई। सन्ध्या करन चले दोउ भाई।।

(बालकाण्ड, पृ. २२६)

पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुबर सन्ध्या करन सिधाए।।

(अयोध्या काण्ड, पृ. ४०५)

समीक्षा- यदि राम ईश्वर थे, तो सन्ध्या क्यों करते थे? और किसकी सन्ध्या करते थे? अपनी या आपकी? और राम के पूर्व किसकी सन्ध्या की जाती थी? कौशल्या, दशरथ आदि राम की सन्ध्या क्यों नहीं करते थे?

(iv) राम का विलाप

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।।

(अरण्य कांड, पृ. ६३४)

जौं जनतेउँ वन बन्धु बिछोहू। पिता वचन मनतेउँ नहिं ओहू।।

(लंकाकांड. पृ. ७६५)

समीक्षा- राम पत्नी की खोज में व्याकुल थे, यहाँ तक कि पागलों की भाँति पशु-पक्षी और पेड़-पौधों से पूछ रहे थे। राम भाई लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर रो रहे थे। मैं पूछता हूँ क्या राम ईश्वर थे? और झूठा ढोंग कर रहे थे? कोई हृदयहीन व्यक्ति ही इसे ढोंग समझेगा और कहेगा कि राम ईश्वर थे, नर-लीला कर रहे थे।

(v) राम सर्वव्यापक नहीं

राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम।

तनु परिहरि रघुबर बिरहँ, राउ गयउ सुरधाम।।

(अयोध्या काण्ड, पृ. ४५७)

समीक्षा- यदि राम सर्वव्यापक होते तो अयोध्या में उस समय भी होते, जब बन को चले गये थे। और राजा दशरथ को पुत्र शोक में न मरना पड़ता।

(vi) राम सर्वज्ञ नहीं

कारन कवन बसहु वन, मोहि कहहु सुग्रीव ।।
एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ। तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ ।।

(किष्किंधा काण्ड, पृ. ६५८, ६६२)

समीक्षा- यदि राम सर्वज्ञ होते तो उन्हें पहले से ज्ञात होता कि क्यों सुग्रीव वन में रह रहा है और बालि और सुग्रीव को पहचानने में भ्रम नहीं होता।

(vii) राम के समकालीन उन्हें ईश्वर नहीं मानते थे

दशरथ-

चौथेंपन पायउँ सुत चारी। बिप्र वचन नहिं कहेहु बिचारी ।।
कहँ निसिचर अतिघोर कठोरा। कहँ सुन्दर सुत परम किसोरा ।।

(बालकाण्ड, पृ. २०५,२०६)

विश्वामित्र-

रघुकुल मनि दसरथ के जाए। ममहित लागि नरेस पठाए।।

(बालकाण्ड, पृ. २१३)

(viii) राम स्वयं को मनुष्य मानते थे

कोसलेस दसरथ के जाए। (किष्किंधा काण्ड, पृ. ६५५)

समीक्षा- राम स्वयं को मनुष्य बताते हैं। अतः तुलसीदास का यह कहना कि राम ईश्वर थे' व्यर्थ है और वही कहावत चरितार्थ होती है- 'मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त।'

नोटः- इस प्रकार सिद्ध होता है कि अवतारवाद तुलसी का दुराग्रह मात्र है। राम ईश्वर नहीं, मनुष्य थे। राम राजा दशरथ के सुपुत्र थे, हमारे पूर्वज थे। राम महापुरुष थे। उन्हें संसार मर्यादा पुरुषोत्तम राम के नाम से याद करता आ रहा है।

प्रश्नः यदि राम को ईश्वर मान लिया जाय तो क्या हानि है?

उत्तर- राम को ईश्वर मान लेने में एक नहीं अनेक हानियां हैं, और ऐसी-ऐसी भयंकर हानियां है, जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

जैसे:-

(१) **सत्य का नाशः-** राम ईश्वर नहीं थे। अतः उन्हें ईश्वर या ईश्वर का अवतार मान लेना सत्य का गला घोट देना है।

(२) **ईश्वर का अपमानः-** ईश्वर को नारायण से नर मानना, उसका अपमान करना है। क्योंकि वह सर्वज्ञ से अल्पज्ञ और सर्वशक्तिमान् से अल्पशक्तिमान् हो जाता है।

(३) **राम की महत्ता का नाशः--** राम की महत्ता उन्हें ईश्वर मानने पर समाप्त हो जाती है। क्योंकि यदि ईश्वर राम ने रावण आदि दुष्टों को मारा तो कोई बहादुरी की बात नहीं, कारण कि ईश्वर के लिए रावण आदि कुछ नहीं।

(४) **इतिहास का नाशः-** राम को ईश्वर बनाने की धुन में कई अनर्गल बुद्धि शून्य, चमत्कारपूर्ण बातें घड़ ली गईं, जिससे राम की ऐतिहासिकता में भी सन्देह किया जाने लगा। यह कहा जाने लगा कि रामायण कवि की कल्पना मात्र है। लेकिन ऐतिहासिक तथ्यों को कदापि नहीं झुठलाया जा सकता।

(५) **जातीय गौरव का ह्रासः-** राम आर्य जाति के महान् पुरुष थे। राम हमारे पूर्वज थे। परन्तु राम को ईश्वर मानने पर जातीय गौरव समाप्त हो जाता है।

(६) **प्रेरणा का स्रोत सूख जाता हैः-** महापुरुष प्रकाश स्तम्भ होते हैं, और जीवन में हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि Longfellow ने लिखा है-

Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime.
And departing leave behind us,
Footprints on the sands of time.

— Sum Of Life

(७) आत्महीनता का शिकारः- हम सोचते हैं कि राम ईश्वर थे, ऐसा कार्य वही कर सकते थे और हमारे द्वारा ऐसा कार्य सम्भव नहीं।

(८) स्वाभिमान शून्य जीवनः- देश में अत्याचार होता है। देशद्रोही सिर उठाते हैं, राम मुर्दाबाद के नारे लगाये जाते हैं, परन्तु अवतारवादी हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं, कोई प्रतिक्रिया नहीं करते, कहते हैं कि अभी पाप का घड़ा नहीं भरा है, जब पाप का घड़ा भर जायेगा तो अवतार होगा और अधर्म का नाश होगा।

(९) चरित्र का नाशः- अपने पापों की ओट लेने के लिए अनेकों धूर्त पापपूर्ण बातें महापुरुषों की जीवनी में जोड़ देते हैं और पापी लोग कहते हैं कि जब भगवान् ही ऐसा करते थे तो हमारे करने में क्या दोष है?

(१०) मूर्तिपूजा का प्रचारः- अवतारवादी कहते हैं कि राम ईश्वर थे। वे साकार थे। अतः उनकी मूर्ति बनती है और उनकी मूर्ति की पूजा करते हैं। इस प्रकार मूर्तिपूजा का प्रचार होता है।

(११) साम्प्रदायिकता का प्रसारः- तुलसीदास कहते हैं-

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ।।

(बालकाण्ड, पृ. १३८)

इसी आधार पर अनेकों धूर्त अपने को अवतार बताकर अपने सम्प्रदाय चलाये हैं और भोली भाली जनता को ठगकर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। जैसे- हंसासिंह अपने को राम और कृष्ण का अवतार घोषित करके हंसामत चलाया है।

त्रेता में तुम राम बनें, द्वापर में कृष्ण कहाये ।
कलियुग में भक्तों के कारण, हंस रूप धरि आये ।।

(हंस भजनावली पृ. ३८२)

(१२) नास्तिकता का प्रचारः- अवतारों के घिनौने चित्र देखकर अनेकों बुद्धिजीवी भी ईश्वर और धर्म के विरुद्ध उठ खड़े होते हैं।

अध्याय ३

तुलसी रामायण : प्रमत्त प्रलाप

तुलसीदास ने अपने रामायण में वहुत सी परस्पर विरोधी वातें लिखी हैं। जैसे—

(१) ईश्वर अवतार नहीं लेता

विनु पद चलइ सुनइ विनु काना। कर विनु करम करइ विधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी। विनु वानी वकता बड़ जोगी।।
तन विनु परस नयन विनु देखा। ग्रहइ घ्रान विनु वास असेषा।।
असि सव भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं वरनी।।

(बालकाण्ड, पृ. १३५)

ईश्वर अवतार लेता है

जव जव होइ धरम कै हानी। वाढ़हि असुर अधम अभिमानी।।
तव तव प्रभु धरि विविध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

(बालकाण्ड, पृ. १३८)

(२) राम विष्णु के अवतार थे

देखो, पृ० १४

राम विष्णु के स्वामी थे।

जाके वल विरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।।

(सुन्दर काण्ड, पृ. ७०४)

(३) राम ईश्वर थे

देखो, पृ० १४,१७ तथा १८

राम मनुष्य थे

देखो, पृ. १८–२०

(४) दशरथ, विश्वामित्र, वशिष्ठ, रावण आदि तर्क से पहचान लेते हैं कि राम ईश्वर हैं। देखो, पृ. १७ और १८.

परन्तु सती, परशुराम और गरुड़ तर्क से राम को नहीं पहचान पाये

समीक्षा- ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज, अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर, जाहि न जानत बेद।।
(बालकाण्ड, पृ. ८१)

परशुराम-राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर सन्देहू।।
(बालकाण्ड, पृ. २६६)

गरुड़- भव बंधन ते छूटहिं, नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ, नागपास सोइ राम।।
(उत्तर काण्ड, पृ. ६२३)

समीक्षा - सती, परशुराम और गरुड़ राम को क्यों नहीं पहचान पाये? आप कहेंगे कि ये तीनों घमंडी थे। सती को ज्ञान का, परशुराम को बल का और गरुड़ को सेवा का घमंड था।

मैं पूछता हूँ क्या रावण कम घमंडी था जो राम को पहचान गया?
खर दूषन मोहिं सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।।
(अरण्य काण्ड, पृ. ६२५)

(५) राम ईश्वर हैं

श्रुति सेतुपालक राम तुम्ह जगदीस। (अयोध्या काण्ड, पृ. ४३४)

शिव ईश्वर हैं

संकरु जगत बंद्य जगदीसा। (बालकांड, पृ. ८०)

(६) राम शिव से बड़े थे

राम नाम सिव सुमिरन लागे। (बालकाण्ड, पृ. ८८)

राम शिव से छोटे थे

पूजि पुरारि साधु सनमाने। (अयोध्या काण्ड, पृ. ५१३)

(७) जगत के कर्त्ता-धर्त्ता-संहर्त्ता ब्रह्मा, विष्णु महेश (त्रिदेव) हैं।

जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।।

(सुन्दर काण्ड, पृ. ७०४)

जगत् की रचना, पालन और संहार करने वाली सीता है।

.... माया जानकी।
जो सृजति जगु पालति हरति ....——।।

(अयोध्या काण्ड, पृ. ४३४)

(८) राम सन्ध्या करते थे

पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुवर सन्ध्या करन सिधाए।।

(अयोध्या काण्ड, पृ. ४०५)

राम मूर्तिपूजा करते थे

तब मज्जनु करि रघुकुल नाथा। पूजि पारथिव नायउ माथा।।

(अयोध्या काण्ड, पृ. ४१५)

(९) ज्ञान से मुक्ति

ग्यान मोच्छप्रद वेद बखाना। (अरण्य कांड, पृ. ६१५)

काशी में मरने से मुक्ति

कासीं मरत परम पद लहहीं।। (बालकाण्ड पृ. ७७)

राम के हाथे मरने से मुक्ति

तहाँ जलंधर रावन भयऊ। रन हति राम परम पद दयऊ।।

(बाल काण्ड पृ. १४०)

(१०) मुक्ति का साधन वेद

वंदउँ चारिउ बेद, भव वारिधि बोहित सरिस। (बालकाण्ड, पृ. ४७)

मुक्ति का साधन रामायण

भवसागर चह पार जो पावा। राम कथा ताकहँ दृढ़ नावा।।

(उत्तर कांड, पृ. ९१९)

(११) वेद की प्रशंसा

वंदउँ चारिउ बेद, भव वारिधि बोहित सरिस। (बालकाण्ड)
अग्य अकोविद अंध अभागी। काई विषय मुकुर मन लागी।।
लंपट कपटी कुटिल बिसेषी। सपनेहुँ सन्त सभा नहिं देखी।।
कहहिं ते बेद असंमत बानी। (बालकाण्ड, पृ. १३२)

वेद की निन्दा

भिन्न भिन्न अस्तुति करि, गए सुर निज निज धाम ।
बंदी वेष वेद तब, आए जहँ श्रीराम ।।

(लंका काण्ड, पृ. ८८२)

(१२) कर्म की प्रधानता

करम प्रधान विस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा।।
(अयोध्या काण्ड, पृ. ५०७)

भाग्य की प्रधानता

होइहि सोइ जो राम रचि राखा। (बालकाण्ड, पृ. ८२)

(१३) कर्म प्रधान

कर्म की प्रधानता मानते हुए तुलसीदास जी क्षत्रिय कुलोत्पन्न विश्वामित्र को विप्र (ब्राह्मण) संज्ञा देते हैं-

चौथेपन पायउँ सुत चारी। विप्र वचन नहिं कहेहु विचारी।।
(बालकाण्ड पृ. २०५)

इतना ही नहीं ब्राह्मण कुलोत्पन्न रावण को राक्षस कहा और क्षत्रिय राम के द्वारा उसका बध करा दिया।

जाति प्रधान

लेकिन जाति की प्रधानता स्वीकार करते हुए तुलसीदास लिखते हैं-

पूजिअ विप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना।।
(अरण्य काण्ड, पृ. ६३८)

नोट—इस प्रकार हम देखते हैं कि जैसे 'पागल कभी कुछ कहता है कभी कुछ, उसी प्रकार तुलसीदास भी अपने रामायण में कभी कुछ लिखे हैं कभी कुछ। इसलिए तुलसी रामायण प्रमत्त प्रलाप है।

अध्याय ४

गप्प चालीसा

गप्प नं० (१) वेद में राम की कथा

सेस सारदा बेद पुराना। सकल करहिं रघुपति गुन गाना।।
अर्थात् वेद में राम का वर्णन है। (बालकाण्ड, पृष्ठ १२७)

समीक्षाः— झूठ, बिल्कुल झूठ। लगता है तुलसीदास ने वेद की शकल भी नहीं देखी थी, वरना यदि वेद पढ़े होते तो ऐसी बात कदापि नहीं लिखते। क्योंकि वेद ईश्वरीय ज्ञान के ग्रंथ हैं। जैसे ईश्वर अनादि और नित्य है, वैसे ही उसका ज्ञान (वेद) भी अनादि और नित्य है। वेद इतिहास ग्रंथ नहीं है। वेद में राम का वर्णन कहाँ से आयेगा? जब कि राम वेद को पढ़ते थे और राम के बाप-दादा भी वेद को पढ़े थे।

गप्प नं० (२) कासी में मरने से मुक्ति

कासी मरत परम पद लहहीं ।। (बालकाण्ड, पृ. ७७)

अर्थात् कासी में मरने से मुक्ति हो जाती है।

समीक्षाः— झूठ, महाझूठ। यदि कासी में मरने से मुक्ति होती तो कासी में रहने वाले सभी मनुष्य चोर, डाकू, बदमाश भी मुक्त हो जाते और मनुष्य ही नहीं पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े सभी जीव जन्तु मुक्ति पाते। सावधान! कासी में मरने से मुक्ति नहीं होती, मुक्ति होती है सत्कर्म करने से। इसलिए सदैव सत्कर्म करो, भूलकर भी कभी दुष्कर्म मत करो।

गप्प नं० (३) शंकर द्वारा ८७ हजार वर्ष तपस्या

बीतें संबत सहस सतासी। तजी समाधि संभु ..... ।।
(बालकाण्ड, पृ. ८८)

अर्थात् शंकर ने ८७ हजार वर्ष तक समाधि लगाया था।

समीक्षाः- यह भी महा गप्प है। क्योंकि इतने लम्बे समय तक तो कोई जीवित नहीं रह सकता, समाधि की बात तो दूर है।

गप्प नं० (४) मनु की लंबी तपस्या

एहि विधि बीते बरष षट, सहस बारि आहार ।
संवत सप्त सहस्र पुनि, रहे समीर अधार ।।
बरष सहस्र दस त्यागेउ सोऊ। (बालकाण्ड, पृ. १५६)

अर्थात् मनु ने ६००० वर्ष तक जल पीकर, ७००० वर्ष तक हवा पीकर और १०००० वर्ष तक बिना हवा के जीवित रहे।

समीक्षाः- यह भी गप्प नं० (३) की तरह गपोड़ा है।

गप्प नं० (५) नाग शैया

जौं अहि सेज सयन हरि करहीं। (बालकाण्ड, पृ. ९५)

अर्थात् भगवान् विष्णु शेष नाग के फन पर (नाग शैया पर) सोते हैं।

समीक्षा-- यह भी बहुत बड़ा गप्प है। नाग अत्यन्त विषैला और खतरनाक होता है, कोई उसको छू भी नहीं सकता, उसके फन पर सोना तो दूर की बात है।

गप्प नं० (६) राम तर्क से परे

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। (बालकाण्ड, पृ. १३८)

अर्थात् राम को तर्क द्वारा नहीं जान सकते। राम तर्क से परे हैं।

समीक्षाः-- देखिये, पृ. ११

गप्प नं० (७) शंकर पार्वती द्वारा गणेश की पूजा

गनपतिहि पूजेउ संभु भवानि। (बालकाण्ड, पृ० १२१)

अर्थात् शंकर और पार्वती ने विवाह में गणेश की पूजा किया।

समीक्षाः-- गणेश तो शंकर-पार्वती के लड़के थे। अपने पुत्र की पूजा कौन करेगा? और विवाह हुआ नहीं, पुत्र कहाँ से? आप कहेंगे कि वह गणेश दूसरा था। मैं कहता हूँ वह गणेश दूसरा नहीं था, हाथी की सूड़ (कलम) उसकी पहचान है।

गप्प नं० (८) नदी और पहाड़ को निमंत्रण

तुरत भवन आए गिरि राई। सकल सैल सर लिए बोलाई।।

अर्थात् नदी पहाड़ को निमंत्रण दिया गया। (बालकाण्ड, पृ. १२३)

समीक्षाः-- यह सृष्टिक्रम विरुद्ध गप्प है। नदी और पहाड़ तो जड़ हैं, चेतन नहीं। उनमें बोलने-डोलने की सामर्थ्य कहाँ?

गप्प नं० (९) ईश्वर अवतार लेता है।

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

अर्थात् ईश्वर अवतार लेता है। (बालकाण्ड, पृ. १३८)

समीक्षाः- देखिये- पृ. ७

गप्प नं० (१०) मछली आदि अवतार

मीन कमठ सूकर नरहरी। बामन परसुराम बपु धरी।।
(लंका काण्ड, पृ. ८५१)

अर्थात् ईश्वर मछली आदि का शरीर भी धारण करता है।

समीक्षाः-- देखिये, पृ. ७

गप्प नं० (११) नर लीला

ग्यान गिरा गोतीत अज, माया मन गुन पार।
सोइ सच्चिदानंद घन, कर नर चरित उदार ।।
(उत्तर काण्ड, पृ. ८९६)

अर्थात् ईश्वर अवतार लेकर नर-लीला करता है।

समीक्षाः-- ईश्वर अवतार नहीं लेता (देखिये, पृ.७) यदि ईश्वर नरलीला करता है तो यह भी मानना पड़ेगा कि ईश्वर मछली लीला, कछुआ लीला, सूअर लीला भी करता है क्योंकि--

मीन कमठ सूकर नरहरी। बामन परसुराम बपु धरी।।

गप्प नं० (१२) राहू के ग्रसने से ग्रहण

अजहुँ देत दुख रबि ससिहि, सिर अवसेषित राहु।।
(बाल काण्ड, पृ. १७५

अर्थात् राहू के ग्रसने से सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण लगते हैं।

समीक्षाः-- यह विज्ञान विरुद्ध गप्प है। क्या सिर कट जाने पर कोई जीवित रह सकता है? नहीं। तो सिर कट जाने पर राहू कैसे जीवित है? देखो! ग्रहण राहू-केतू के ग्रसने से नहीं बल्कि पृथ्वी-सूर्य-चंद्र तीनों एक सीध में आ जाने से होता है। और सूर्य चंद्र तो जड़ हैं उन्हें सुख-दुःख कैसे होगा?

गप्प नं० (१३) रावण के १० सिर और २० भुजाएँ

दस सिर ताहि बीस भुज दंडा। (बालकाण्ड, पृ. १७६)

अर्थात् रावण के १० सिर और २० भुजाएँ थीं।

समीक्षाः-- यह भी महागप्प है। यदि रावण के १० सिर और २० भुजाएं थीं तो वह कैसे खाता-पीता और सोता था? तथा अपना काम कैसे करता था? देखो! यदि रावण के १० सिर और २० भुजाएं होतीं तो वह सीता का अपहरण नहीं कर पाता क्योंकि सीता उसे पहचान जाती कि यह राक्षसराज रावण है, कोई साधु नहीं।

गप्प नं० (१४) ब्रह्मा के ४ मुख और शंकर के ५ मुख

विष्नु चारि भुज बिधि मुख चारी। बिकट बेष मुख पंच पुरारी।।
(बालकाण्ड, पृ. २१६)

अर्थात् ब्रह्मा के ४ मुख और शंकर के ५ मुख थे।

समीक्षा-- यह भी विज्ञान विरुद्ध गप्प है।

गप्प नं० (१५) पृथ्वी का गाय बनना

अतिसय देखि धरम कै ग्लानी। परम सभीत धरा अकुलानी।।
धेनु रूप धरि हृदयँ बिचारी। गई तहाँ जहँ सुर मुनि झारी।।

अर्थात् पृथ्वी ने गाय का रूप धारण किया। (बालकाण्ड, पृ. १८६)

समीक्षाः-- यदि पृथ्वी गाय बन गई तो उस समय हाथी, घोड़े आदि जीव जन्तु तथा बड़े-बड़े वृक्ष, नदी, पहाड़ कहाँ रहे? क्या गाय पर? और गाय कहाँ रही? क्या बिना आधार के?

गप्प नं० (१६) अहिल्या का पत्थर बनना

गौतम नारि श्राप वस, उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति, कृपा करहु रघुवीर।

(बालकाण्ड, पृ. २०८)

अर्थात् गौतम के शाप के कारण उनकी पत्नी अहिल्या पत्थर बन गई।

समीक्षाः-- यह सृष्टिक्रम विरुद्ध बात है। औरत कदापि पत्थर नहीं बन सकती। देखो! महर्षि दयानन्द कहते हैं-

"इन्द्र और अहल्या की कथा को मूर्खों ने विगाड़ के लिखा है कि देवताओं का राजा इन्द्र गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या से जार कर्म किया करता था। एक दिन जव उन दोनों को गौतम ने देख लिया तो इन्द्र को शाप दिया कि तू हजार भगवाला हो और अहल्या को शाप दिया कि तू पत्थर हो जा।

सद्ग्रंथों में ऐसा नहीं है। सूर्य का नाम इन्द्र, रात्रि का अहिल्या तथा चन्द्रमा का गोतम है।*

यहाँ रात्रि और चन्द्रमा का रूपक अलंकार है। चन्द्रमा अपनी स्त्री रात्रि से सव प्राणियों को आनन्द कराता है और उस रात्रि का जार सूर्य है। सूर्य के उदय होने से रात्रि का अंधेरा समाप्त हो जाता है।"

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका)

गप्प नं० (१७) पत्थर का स्त्री बनना

छुअत सिला भइ नारि सुहाई। (अयोध्या कांड पृ० ४१३)

अर्थात् पत्थर छूने से स्त्री बन गई।

समीक्षाः-- यह भी गप्प है। ऐसा कदापि नहीं हो सकता। यह सृष्टिक्रम विरुद्ध है।

---

*चंद्रमा का नाम गोतम इसलिए है कि वह अत्यन्त वेग से चलता है और रात्रि को 'अहल्या' इसलिए कहते है कि उसमें दिन लय हो जाता है। तथा सूर्य रात्रि को निवृत्त कर देता है, इसलिए वह उसका जार कहाता है।

गप्प नं० (१८) एक माह का दिन

मास दिवस कर दिवस भा, मरम न जानइ कोइ ।
रथ समेत रवि थाकेउ, निसा कवन विधि होइ ।।

(बालकांड पृ० १६६)

अर्थात् जब राम पैदा हुए थे तो १ माह का दिन हुआ था। इस रहस्य को कोई नहीं जानता।

समीक्षाः-- यह गप्प है एवं सृष्टिक्रम विरुद्ध बात है। देखो! सूर्य की गति के कारण दिन-रात नहीं होता जैसा कि तुलसीदास ने लिखा है। पृथ्वी की गति के कारण दिन-रात होता है। पृथ्वी २४ घंटे में अपनी कीली पर एक चक्कर लगाती है। अतः २४ घंटे में ही दिन-रात दोनों होता है। यह अटल नियम है। अतः यह कहना कि १ महीना का दिन हुआ सफेद झूठ है। और इस झूठ का पर्दाफास स्वयं तुलसीदास के ही मुख से तुरन्त हो जाता है जब वे कहते हैं 'मरम न जानइ कोय।' अर्थात् इस रहस्य को कोई नहीं जानता।

मैं पूछता हूँ जब महीने भर का दिन हुआ ही नहीं तो जानेंगे कैसे? और तत्कालीन लोगों को यह पता नहीं, लाखों-करोड़ो वर्षों बाद तुलसीदास को कैसे पता चला?

गप्प नं० (१६) विष्णु के पैर से गंगा निकली

जेहिं पद सुरसरिता परम पुनीता, प्रगट भई सिव सीस धरी।

(बाल कांड, पृ० २०६)

अर्थात् गंगा नदी विष्णु के पैर से उत्पन्न हुई।

समीक्षाः- यह बात गलत है। गंगा गंगोत्री (हिमालय) से निकली है।

गप्प नं० (२०) सीता द्वारा मूर्तिपूजा

मोर मनोरथ जानहु नीकें। बसहु सदा उर पुर सबही के।।

अर्थात् सीताजी मूर्तिपूजा करती थीं। (बाल कांड, पृ० २२८)

समीक्षाः देखिये, पृ० ५ तथा ६

गप्प नं० (२१) मूर्ति का आशीर्वाद देना

विनय प्रेम वस भई भवानी। खसी माल मूरति मुसुकानी।।
सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।

अर्थात् मूर्ति सीता को आशीर्वाद देती है। (वाल कांड, पृ० २२८)

समीक्षाः- मूर्ति तो जड़ है, जो न डोलती है और न बोलती है। मूर्ति में चेतनता नहीं तो वह आशीर्वाद कैसे देगी?

गप्प नं० (२२) शिव का अद्भुत धनुष

भूप सहस दस एकहि बारा। लगे उठावन टरइ न टारा।।

(बाल कांड, पृ० २४१)

अर्थात् एक धनुप १० हजार राजा एक साथ उठा नहीं सके।

समीक्षाः धनुप कितना बड़ा था कि १० हजार लोग एक साथ उसे पकड़ सके? और धनुप कितना वजनी था कि इतने लोग उसे उठाना तो दूर हिला भी नहीं सके? धनुप था या पहाड़?

गप्प नं० (२३) अग्नि और वेद का शरीर धारण करना

होम समय तनु धरि अनलु, अति सुख आहुति लेहिं।
विप्र वेष धरि बेद सब, कहि बिबाह बिधि देहिं।।

(बालकांड, पृ० २६८)

अर्थात् होम के समय अग्नि ने शरीर धारण करके आहुति लिया तथा वेद ने ब्राह्मण का रूप धर के विवाह कराया।

समीक्षाः- यह सृष्टिक्रम विरुद्ध होने से गप्प है।

गप्प नं० (२४) राम द्वारा शिवलिंग पूजा

लिंग थापि विधिवत करि पूजा। (लंका कांड, पृ० ७४१)

अर्थात् राम मूर्तिपूजा करते थे।

समीक्षाः देखिये! पृ० ५ तथा ६

गप्प नं० (२५) लक्ष्मण के स्वागत में मछली

मीन पीन पाठीन पुराने। भरि भरि भार कहारन्ह आने।।

(अयोध्या कांड, पृ०४८६)

अर्थात् भरत के स्वागत में मछलियां भेट किया गया।

समीक्षाः- निपादराज गुह ने भरत की सेवा में मछलियां क्यों भेंट किया? क्या भरत मछली खाते थे? कदापि नहीं, क्योंकि राम, लक्ष्मण, भरत आदि सभी वैदिक धर्मी थे। यह बात तुलसीदास भी मानते हैं-

निरत वेद पथ लोग। (उत्तर कांड, पृ०- ८६१)

महर्षि वाल्मिकि ने लिखा हैः- निपादराज गुह तथा उसके सभी साथी भी शाकाहारी थे (कन्द मूल फलाशनाः। अयो० कांड) और उन्होंनें भरत की सेवा में कन्द मूल फल ही भेंट किया था-

अस्ति मूलं फलं चैव निषादैः समुपाहृतम्।

आर्द्रं कन्दं च शुष्कं च, वन्यं चोच्चावचंमहत् ।। (अयो० कांड)

गप्प नं० (२६) सीता छाया छोड़के अग्नि में चली गई थी

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करव ललित नरलीला ।।
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा ।।
जबहि राम सब कहा बखानी। प्रभु पद धरि हियँ अनल समानी ।।
निज प्रतिबिम्ब राखि तहँ सीता। तैसइ सील रूप सुबिनीता ।।
लछिमनहूँ यह मरमु न जाना। जो कछु चरित रचा भगवाना ।।

(अरण्य कांड, पृ० ६२६)

अर्थात् सीता अपनी छाया छोड़कर अग्नि में चली गई। इस रहस्य को लक्ष्मण भी नहीं जान पाये।

समीक्षाः-- यह गप्प है। देखो! छाया और काया का अभिन्न संबंध होता है। प्रतिबिम्ब वहीं होता है जहाँ शरीर होता है। सीता छाया छोड़कर अग्नि में चली गई, इसकी पोल आगे खुल जाती है क्योंकि लक्ष्मण इस रहस्य को नहीं जान सके। मैं पूछता हूँ जब लक्ष्मण नहीं जान सके तो तुलसीदास कैसे

जान गये? क्या सीता की छाया को रावण चुराया था? क्या सीता की छाया के लिए राम रो रहे थे? क्या सीता अग्नि में न जाती तो राम राक्षसों का संहार नहीं कर पाते?

गप्प नं० (२७) हनुमान जी बन्दर थे

कपि कें ममता पूँछ पर, सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि, पावक देहु लगाइ।।
पूँछ हीन बानर तँह जाइहि। तब सठ निज नाथहि लइ आइहि।।

अर्थात् हनुमान जी बन्दर थे। (सुंदर कांड, पृ० ७०७)

समीक्षाः हनुमान जी बन्दर नहीं थे। उन्हें बन्दर बताना बन्दरों का काम है। देखो! हनुमान जी राम के बहुत बड़े भक्त थे। सीता की खोज उन्हीं ने की थी। लक्ष्मण का प्राण बचाने के लिए संजीवनी बूटी उन्होंने लाया था। वे बड़े वीर थे। इसलिए उन्हें महावीर भी कहा जाता है।

हनुमानजी राजा सुग्रीव के मंत्री थे। वे बड़े विद्वान् भी थे। राम कहते हैं—

सचिवोऽयं कपीन्द्रस्य सुग्रीवस्य महात्मनः।
तमेव काँक्षमाणस्य ममान्तिकमिहागतः।।
नाऋग्वेद विनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेव विभाषितम्।।
नूनं व्याकरणं कृत्सनमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहार तानेन न किञ्चिदपशब्दितम्।।

(वा० रा० किष्किंधाकांड)

अर्थात् हे लक्ष्मण! ये (हनुमानजी) राजा सुग्रीव के मंत्री हैं और उन्हीं की इच्छा से मेरे पास आये हैं। जिस व्यक्ति ने ऋग्वेद को नहीं पढ़ा है, जिसने यजुर्वेद को धारण नहीं किया है, जो सामवेद का पंडित नहीं है, वह ऐसी वाणी नहीं बोल सकता है जैसी ये बोल रहे हैं। इन्होंने निश्चयपूर्वक सम्पूर्ण व्याकरण पढ़ा है क्योंकि कोई अशुद्ध शब्द नहीं बोला है।

इस प्रकार हनुमान की पूछ सर्वत्र थी। इस बात को न समझने के कारण

तुलसीदास ने लिख दिया कि हनुमान की पूँछ (दुम) बड़ी लंबी थी। दूसरे शब्दों में हनुमान जी बन्दर (पशु) थे।

हनुमानजी को बन्दर कदापि नहीं माना जा सकता क्योंकि बन्दर का गला इतना सिकुड़ा होता है कि वह केवल किलकारी मार सकता है स्पष्ट शब्दोच्चारण भी नहीं कर सकता वेद का विद्वान् एवं व्याकरण का ज्ञाता होना तो दूर की बात है।

गप्प नं० (२८) जटायु गिद्ध थे

चोचन्ह मारि बिदारेसि देही।

काटेसि पंख परा खग धरनी। (अरण्ड कांड, पृ० ६३३)

अर्थात् जटायु गिद्ध (पक्षी) था।

समीक्षाः जटायु पक्षी नहीं, मनुष्य थे। वे राजा दशरथ के मित्र थे।

गप्प नं० (२९) अपना सिरकाटकर पूजा करना

सिर सरोज निज करन्हि उतारी। पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी।।

(लंका कांड, पृ० ७६३)

अर्थात् रावण अपना सिर काटकर शिव की पूजा करता था।

समीक्षाः यह गप्प है क्योंकि सिर काटने पर कोई जीवित नहीं रह सकता।

गप्प नं० (३०) पृथ्वी सर्प के फन पर

जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरि कानन।।

अर्थात् पृथ्वी शेष नाग के फन पर है। (सुन्दर कांड, पृ० ७०४)

समीक्षाः यह भी गप्प है। यदि पृथ्वी सर्प पर है तो सर्प किस पर है? क्या सर्प बिना आधार के है?

गप्प नं० (३१) एक साथ अनेकों शरीर धारण करना

अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला।।

छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना।।

(उत्तर कांड, पृ० ८७५)

अर्थात् राम अनेकों शरीर धारण कर सबसे एक साथ मिले।

समीक्षाः यह गप्प है ऐसा कदापि संभव नहीं। मैं पूछता हूँ कि यह बात तत्कालीन लोग क्यों नहीं जान सके? और तुलसीदास तो उस समय नहीं थे फिर कैसे जान गये?

गप्प नं० (३२) राम द्वारा चरणामृत लेना

एक बार बसिष्ठ मुनि आए। जहाँ राम सुखधाम सुहाए।।
अति आदर रघुनायक कीन्हा। पद पखारि पादोदक लीन्हा।।

अर्थात् राम ने चरणोदक लिया। (उत्तर कांड, पृ० ९१४)

समीक्षाः यह महा झूठ है। राम ऐसा कदापि नहीं कर सकते, क्योंकि राम वैदिक धर्मी थे। चूँकि पैर धोने से गंदगी निकलती है, इसलिए चरणोदक लेना शिष्टाचार नहीं है एवं स्वास्थ्य विज्ञान के विरुद्ध है।

गप्प नं० (३३) कौआ कल्पान्त में भी नहीं मरता

तेहिं गिरि रुचिर बसइ खग सोई। तासु नास कल्पान्त न होई।।

(उत्तर कांड, पृ० ९२२)

अर्थात्, कौआ (काग भुशुंडी) कल्पान्त मे भी नहीं मरता।

समीक्षाः इससे बडा गप्प क्या हो सकता है कि कौआ कभी नहीं मरता। अरे, कल्प के अन्त में तो प्रलय हो जाता है सूर्य, चंद्र, पृथ्वी सब नष्ट हो जाते हैं कौआ कैसे बच सकेगा? आज विज्ञान के युग में मनुष्य हवाई जहाज से सब पहाड़ छान डाला है कहीं वह कौआ नहीं मिला जो सब पक्षियों को रामायण (राम की कथा) सुनाया करता हो।

गप्प नं० (३४) शिव का हंस रूप धारण करना

तब कछु काल मराल तनु, धरि तहँ कीन्ह निवास।
सादर सुनि रघुपति गुन, पुनि आयउँ कैलास।।

(उत्तर कांड, पृ ९२३)

अर्थात् शिव ने हंस का रूप धारण कर कौआ (कागभुशुंडी) से राम-

कथा सुना।

समीक्षाः यह सृष्टि क्रम विरुद्ध गप्प है। मैं पूछता हूँ कि शिव ने कौआ से राम-कथा क्यों सुना? क्या उन्हें कोई ऋषि-मुनि नहीं मिला?

गप्प नं० (३५) राम कौआ के पीछे उड़ रहे थे

जानु पानि धाए मोहि धरना। स्यामल गात अरुन कर चरना।।
तब मैं भागि चलेउँ उरगारी। राम गहन कहँ भुजा पसारी।।
जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा। तहँ भुज हरि देखउँ निज पासा।।

(उत्तर कांड, पृ० ६४१)

समीक्षाः यह महा गप्प है। मैं पूछता हूँ क्या राम के पंख थे जो कौआ के पीछे-पीछे उड़ रहे थे? शिशु राम कौआ के पीछे-पीछे उड़ रहे थे किन्तु माता कौशल्या ने अपने दुधमुँहे बच्चे की खबर क्यों नहीं ली? दशरथ आदि को इस बात का पता नहीं, परन्तु लाखों-करोड़ों वर्षों बाद तुलसीदास कैसे जान गये? क्या चित्रकूट के घाट पर* जब तुलसी से राम मिले थे (यद्यपि यह भी असंभव है) तो यह बात बताये थे?

गप्प नं० (३६) राम के मुख में कौआ चला जाना

मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं। बिहँसत तुरत गयउँ मुखमाहीं।।
उदर माझ सुनु अंडज राया। देखेउँ बहु ब्रह्मांड निकाया।।
भ्रमत मोहि ब्रह्मांड अनेका। बीते मनहुँ कल्प सत एका।।
दखि कपाल विकल माहि, बिहसे तब रघुबीर।
बिहसत ही मख बाहर, आयउ सन मतिधीर।। दोहा

(उत्तर कांड, पृ० ६४२-६४४)

समीक्षाः यह भी महा गप्प है। प्रश्न है (१) क्या कौआ मुख में जा सकता है? अरे, मुख में मक्खी जाने की बात लिखी होती तो संभव था।

---

*चित्रकूट के घाट पर, भइ सन्तन की भीर।
तुलसिदास चंदन घिसें, तिलक देत रघुबीर।।

(२) कौआ १०० कल्प तक राम के पेट में कैसे रहा? जबकि इतने समय तक राम भी नहीं रहे।

(३) कौआ राम के पेट में चला गया तो क्या उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ? किसी डाक्टर से दवा क्यों नहीं लिया? (४) कौआ इतने समय तक राम के पेट में रहने के बाद बाहर जीवित कैसे निकला?

गप्प नं० (३७) जातिवाद
गप्प नं० (३८) नारी निंन्दा } समीक्षा– देखिये, पृ. ६–१२
गप्प नं० (३९) अन्धविश्वास

गप्प नं० (४०) मरे हुए व्यक्ति का आना

तेंहि अवसर दसरथ तहँ आए। तनय बिलोकि नयन जल छाए।।
अनुज सहित प्रभु बंदन कीन्हा। आसिरबाद पिता तब दीन्हा।।
(लंका कांड, पृ० ८५३)

अर्थात् मरे हुए राजा दशरथ राम से (लंका में) मिलते हैं और उन्हें आशीर्वाद देते हैं।

समीक्षाः यह सृष्टि विज्ञान विरुद्ध बात है। राम के वन चले जाने पर शोक में राजा दशरथ मर गये थे।* परन्तु १४ वर्ष बाद लंका में राम को दर्शन देने कहाँ से आ गये? क्या मरा हुआ आता है? कदापि नहीं। इसलिए मरे हुए दशरथ अपने पुत्र राम को दर्शन दिये, राम ने उनकी वंदना की और पिता नें आशीर्वाद दिया, कपोल कल्पना है।

नोटः-

देखिए! महाभारत के बाद जब वेद सूर्य अस्त हो गया तो अज्ञान अन्धेरा चारों ओर छा गया। जिससे लोगों के दिमाग के तर्क तन्तु ढीले हो गये।

---

*राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरहँ, राउ गयउ सुरधाम।।
(अयोध्या कांड, पृ० ४५७)

और बुद्धि को ताख में रखकर झूठी बातों पर विश्वास करने लगे। इसलिए जो भी चाहा लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए तरह-तरह के हथकंडे अपनाया जिनमें गप्प भी एक है।

तुलसीदास ने भी लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए गप्प मारना आवश्यक समझा और लगे गप्प मारने। उन्होंने एक से बढ़के एक गप्प मारी है जैसा कि पिछले पृष्टों से स्पष्ट है। इस प्रकार तुलसी ने अपने रामायण को गप्पायन बना दिया।

सौभाग्य से एक ऋषि का इस धराधाम पर शुभागमन हुआ जिसे संसार स्वामी दयानंद सरस्वती के नाम से याद करता है। उस ऋषि ने क्या सत्य है क्या असत्य? क्या पाठ्य है क्या अपाठ्य? क्या ग्राह्य है क्या अग्राह्य? इसे जानने के लिए हमे एक कसौटी दिया है जिसे 'पंच परीक्षा' के नाम से पुकारते हैं। यह इस प्रकार है—

(१) जो वेदानुकूल हो वह सत्य और जो वेद विरुद्ध हो असत्य है।
(२) जो सृष्टिक्रम के अनुकूल हो वह सत्य और जो विरुध्द हो असत्य है।
(३) जो आप्त वचन के अनुकूल हो वह सत्य और जो विरुद्ध हो असत्य है।
(४) जो आत्मानुकूल हो वह सत्य और जो विरुद्ध हो असत्य है।
(५) आठ प्रमाण- प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, संभव और अभाव।

(सत्यार्थ प्रकाश. समु०३)

मेरा दावा है कि जो इस कसौटी को मस्तिष्क में धारण कर लेगा, वह कभी भी दिग्भ्रमित नहीं हो सकता। ऋषि दयानंद को कोटिशः धन्यवाद, जिनकी कृपा से पुनः वेद सूर्य उदय हुआ है। अतः हमे अज्ञान अंधकार में ठोकर नहीं खाना चाहिए और वेद के प्रकाश में आगे बढ़ना चाहिंए।

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्माऽमृतं गमयेति।

।। शमित्योम् ।।

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प २३

गीता सत्य की कसौटी पर

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए० एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

★

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी   प्रथम संस्करण : १०००

नवम्बर सन् १९९५ ई०   मूल्य : ४ रुपये

प्राक्कथन

श्रीमद्भगवद्गीता का नाम कौन नहीं जानता? यह अत्यन्त लोकप्रिय पुस्तक है। भारत में तो यह घर-घर मिलेगी। संसार की प्रायः सभी भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। अनेकों विद्वानों ने गीता की टीका लिखकर अपने को धन्य माना है। सभी विद्वान अपनी बातों की संपुष्टी हेतु गीता का प्रमाण देने में अपना गौरव समझते हैं।

परन्तु जब हम गीता का गहराई से अध्ययन करते हैं और इसे सत्य की कसौटी पर कसते हैं तो यह अप्रामाणिक सिद्ध होती हैं। यह कपोल कल्पित पौराणिक पुस्तक है। इसमें वेदविरुद्ध अनेकों बातें लिखी हुई हैं।

देखिये! गो० तुलसीदास ने लिखा है--

कलिमल ग्रसेउ धर्म सब लुप्त भये सद् ग्रंथ ।
दंभिन्ह निज मत कल्पि करि, प्रगट किये बहु पंथ ।।
श्रुति संमत हरि भक्ति पथ, संयुत ज्ञान विवेक ।
तेहि न चलहिं नर मोहवश, कल्पहिं पंथ अनेक ।।

-रामचरितमानस, उत्तरकांड

महाभारत के बाद जब वेदरूपी सूर्य अस्त हो गया तो अज्ञान अन्धकार छा गया। धूर्तों ने अपना-अपना उल्लू सीधा करने के लिए अपना-अपना मत चलाया। कोई वैष्णव मत चलाया तो कोई शैव मत और कोई शाक्त मत आदि।

आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान् डा० श्रीराम आर्य ने लिखा है—

"जब वैष्णव मत के किसी धूर्त की खोपड़ी पर अपना अलग मत चलाने का भूत सवार हुआ तो उसने अर्जुन को मोह और कृष्ण द्वारा उपदेश की झूठी कथा गढ़ी और इस प्रकार गीता की रचना करके कृष्ण पंथ चला दिया।"

—गीता विवेचन

पुराणों के समान गीता भी किसी धूर्त की रचना है। जिस प्रकार

पुराणकारों ने जनता को ठगने के लिए कोई हथकंडा नहीं छोड़ा है, उसी प्रकार गीताकार ने भी कृष्ण पंथ चलाने के लिए वहुत से हथकंडे अपनाया है। गीताकार ने पापों के फल से छूट जाने और सदा के लिए मुक्ति का प्रलोभन दिया है। इतना ही नहीं गीताकार ने कृष्ण को ईश्वर न मानने वालों को गालियां दिया है। और पुराणकारों ने पुराणों की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए उनपर लेखक के स्थान पर व्यास की मुहर लगादीं, तो गीताकार ने गीता को प्रामाणिक सिद्ध करने के लिए उसे व्यास की रचना 'महाभारत' में मिला दिया।

किन्तु एक कहावत हैं- **'सच्चाई छुप नहीं सकती।'** और हम देखते हैं कि गीताकार की चालाकी भी पकड़ में आ जाती है। उसका (गीताकार का) गीता के प्रत्येक अध्याय के अन्त में 'इति श्रीमद्‌भगवद्‌गीतासु' लिखना चोर की दाढ़ी में तिनका है।

नीर-क्षीर विवेकी परमहंस महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज ने पुराणों की भांति गीता का भी खंडन किया। उन्होंनें गीता को प्रामाणिक ग्रंथों की कोटि में नहीं रखा। स्वामीजी ने गीता को त्रिदोष का सन्निपात बताया और कहा कि हम गीता को प्रामाणिक नहीं मानते।

एक बात और। गीताकार नें बड़ी धूर्तता की है। उसने गीता का महत्त्व सभी धार्मिक ग्रन्थों से ऊँचा (वेद से भी ऊँचा) सिद्ध करने के लिए एक श्लोक गढ़कर महाभारत में मिला दिया। लिखा है-

गीता सुगीता कर्त्तव्याः किं अन्यैः शास्त्र संग्रहे ।
या स्वयं पद्‌मनाभस्य, मुखपद्‌माद्‌ विनिःसृता ।।

-महाभारत, भीष्म पर्व ४३/१

अर्थात् केवल गीता का ही मान करना चाहिए क्योंकि वह स्वयं भगवान् विष्णु (एक पौराणिक ईश्वर) के मुख से निकला है। अन्य शास्त्रों के संग्रह करने की कोई आवश्यकता नहीं?

इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि लोगों ने सोचा जब गीता का महत्त्व वेद से अधिक है तो छोटी सी पुस्तक गीता (७०० श्लोक) को छोड़कर विशाल ग्रंथ वेद (लगभग २०,००० मंत्र) में क्यों परिश्रम करें? लोग वेद से मुख

मोड़ लिए तथा गीता की ओर दौड़ पड़े। पहले जहाँ वेद-पाठ होता था, अव वहाँ गीता-पाठ होने लगा।

इसलिए वेद के प्रचार में गीता एक रोड़ा है जिसे हटाना अत्यन्त आवश्यक है।

आशा है प्रस्तुत ग्रंन्थ से वेद का मार्ग प्रशस्त होगा और संसार का कल्याण होगा।

सर्वे भवन्तु सुखिनः,सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ।।

काशी शास्त्रार्थ दिवस
कार्तिक सुदी १२ संवत २०४६ विक्रमी

डा० रामकृष्ण आर्य

पूर्वार्द्ध

गीता कपोल कल्पित है

श्रीमद्भगवद्गीता ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है। गीता कपोल कल्पित पौराणिक पुस्तक है। प्रमाण—

(१) वन गमन के समय अर्जुन ने प्रतिज्ञा की थी—

अर्जुनः प्रति—जानीते भीमस्य प्रियकाम्यया ।
कर्णं कर्णानुगाश्चैव रणं हतास्मिपत्रिभिः ।।
ये चान्ये प्रतियोत्स्यन्ति बुद्धिमोहेन मां नृपाः ।
ताश्च सर्वानहं वाणैः नतास्मि यमसदनम् ।।

—महा० सभा पर्व ७७/३३,३४

अर्थ- अपने भाई भीम को प्रिय करने की इच्छा से मैं अर्जुन यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं युद्ध में कर्ण तथा उसके अनुयायियों को वाणों से मार डालूँगा। और जो अन्य राजा लोग बुद्धि भ्रष्ट हो जाने से शत्रुओं के साथ लड़ेंगे उनको भी वाणों से यमलोक पहुँचा दूँगा।

नोट—

गीता को प्रामाणिक मानने वाले कहते हैं कि शत्रुओं को सामने (कुरुक्षेत्र में) देखकर अर्जुन को मोह हो गया और उसने गांडीव (धनुष) फेंक कर कहा कि मैं नहीं लडूँगा। मैं पूछता हूँ क्या अर्जुन की यह प्रतिज्ञा (कर्ण आदि को मार डालूँगा) झूठी थी? अथवा क्या अर्जुन दृढ़ प्रतिज्ञ नहीं था?

(२) युद्ध से पूर्व अर्जुन ने संजय द्वारा कौरवों को संदेश में कहा-

अनालब्धं जृम्भति गांडीवं धनु-
रनाहता कम्पति मे धनुर्ज्या ।
बाणाश्च मे तूण मुखाद् निसृत्य
मुहुर्मुहुः गन्तुमुशन्ति चैव ।।१०२।।

खड्गः कोशान्तिः सरति प्रसन्नो
हित्वेव जिर्णामुरगस्त्वचस्ताम् ।
ध्वजा वाचा रौद्ररूपा भवन्ति
कदा रथो योक्ष्यते ते किरीटिन् ।।१०३।।

समाददानः पृथगस्त्रमार्गान्
यथाग्निरिद्धो गहनं निदाघे ।
स्थूलकर्ण पाशुपत महास्त्रं
ब्राह्म चास्त्र यच्च शक्रोऽप्यदान्मे ।। १०६।।

वधोधृता वेगवतः प्रमुञ्चन्
नाहं प्रजां किंचिदिहाव. शिष्ये ।
शान्ति लप्स्ये परमो ह्येष भावः
स्थिरो मम ब्रूहि गावल्गणेतान् ।।१०७।।

-महा० उद्योग पर्व अ० ४८

अर्थ- मेरा गांडीव धनुष युद्ध के लिए विना स्पर्श किये ही तना जा रहा है, मेरे धनुष की डोरी विना स्पर्श किये ही हिलने लगी है, और मेरे वाण वार-वार तरकस से निकलकर शत्रुओं को मारने के लिए उतावले हो रहे हैं।।१०२।। मेरी चमचमाती तलवार म्यान से इस प्रकार बाहर निकल रही है मानो सर्प केंचुली छोड़कर चमकने लगा हो। मेरी ध्वजा पर यह भयंकर आवाज गूँज रही है कि अर्जुन! तुम्हारा रथ युद्ध के लिए कव जोता जायेगा।।१०३।।

जैसे गृष्म ऋतु में प्रज्वलित अग्नि जब वन को जलाने लगती है तो किसी भी वृक्ष को नहीं छोड़ती है, वैसे ही शत्रुओं के विनाश में मैं स्थूलकर्ण, पाशुपतास्त्र, ब्रह्मास्त्र और ऐन्द्रास्त्र के प्रयोग एवं वाणों की वर्षा से इस युद्ध में एक भी शत्रु को जीवित नहीं छोड़ूँगा तभी मुझे शान्ति मिलेगी। संजय! तुम मेरे शत्रु कौरवों को स्पष्टरूप से मेरा यह संदेश देना।। १०६, १०७।।

नोट-

जो गीता को सत्य मानते हैं वे बतावें कि क्या अर्जुन अपना यह संदेश मौका पर भूल गया और शस्त्रास्त्र फेंककर युद्ध से मुख मोड़ लिया?

(३) माता कुंन्ती का अर्जुन को सन्देश-

यदर्थं क्षत्रिया सूतो, तस्य कालोऽयमागतः ।
न हि वैरं समासाद्य, सीदन्ति पुरुषर्ष भाः ।।
तयोश्चैतदवज्ञानं यत्, सा कृष्णा सभागता ।
दुःशासनश्च यद् भीमं, कटुकान्यपि अभाषत ।।
पश्यतां कुरु वीराणां, तच्च संस्मारये पुनः ।

महा० उ० प० ६०/१०, २३

अर्थ- हे अर्जुन क्षत्राणी जिस अवसर के लिए पुत्र को जन्म देती है, वह सुअवसर आ गया है। जुआ के समय द्रोपदी को सभा में लाकर दुःशासन ने उसका अपमान किया और गालियां दी, वह तुम्हारा और भीम का ही साक्षात् अपमान था। मैं तुमको प्रतिशोध के लिए उन सब बातों की याद दिलाती हूँ।

नोट—

गीता को प्रामाणिक मानने वालों से मैं पूछता हूँ कि क्या अर्जुन मातृभक्त नहीं था जो कुन्ती के सन्देश को भुलाकर युद्ध से हाथ जोड़ लिया?

(४) युद्ध के ठीक पूर्व कौरवों नें उलूक (शकुनि पुत्र) को भेजकर पांडवों को युद्ध की चुनौती दी थी—

अस्मान वा त्वां पराजित्य, प्रशाधि पृथिवी इमाम् ।
अथवा निर्जितो अस्माभिः, रणे वीर शयिष्यसि ।।

-महा० उ०प० १६०/८१

अर्थ- वीर अर्जुन! या तो तुम हमें हराकर इस पृथ्वी का शासन करो या हमारे हाथों मारे जाकर रणभूमि में सदा के लिए सो जाओ।

नोट—

क्या अर्जुन कायर था जो कौरवों की चुनौती स्वीकार न करके युद्ध में पीठ दिखा दिया?

(५) अर्जुन कृष्ण से कहते हैं—

यदि वा जयेम यदि वा नो जयेयुः। गी० २।६

अर्थात् पता नहीं कि हम जीतेंगे या हारेंगे।

नोट—

अर्जुन वीर योद्धा था। उसे अपनी वीरता पर पूरा भरोसा था। अर्जुन ने युधिष्टिर से कहा था-"हे राजन्! युद्ध में हमारी विजय सुनिश्चित है क्योंकि 'यतो कृष्णः ततो जयः।" (महा०, भीष्म पर्व २१।१२) अर्थात् जहां कृष्ण हैं वहीं विजय है।

क्या कृष्ण उस समय अर्जुन के साथ नहीं थे जो उसे विजयश्री पाने में सन्देह हो गया?

(६) अर्जुन ने कृष्ण से कहा—

सेनयोः उभयोर्मध्ये, रथं स्थापय मेऽच्युत ।।
यावद् एतानि निरीक्षेऽहं, योद्धुकामान् अवस्थितान् ।
कैर्मया सह योद्धव्यं, अस्मिन् रणे समुद्य मे ।।

—गीता १/२१,२२

अर्थात् हे अच्युत! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कीजिए। और जब तक मैं युद्धक्षेत्र में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी इन विपक्षी योद्धाओं को भलीप्रकार न देख लूँ कि इस युद्ध रूप व्यापार में मुझे किन-किन के साथ युद्ध करना योग्य है, तब तक उसे खड़ा रखिये।

नोट—

क्या अर्जुन यह नहीं जानता था कि उसे किनसे युद्ध करना है? अर्जुन तो पांडव की सेना का मुख्य सेनापति था। वास्तव में गीता की रचना करने के लिए ही गीताकार ने झूठा ताना—बाना बुना था।

(७) अर्जुन बोले—

सीदन्ति मम गात्राणि, मुखं च परिशुष्यति ।
वेपथुश्च शरीरे मे, रोमहर्षः च जायते ।।गीता १/२६

अर्थात् मेरे अंग शिथिल हुए जा रहे हैं, मुख सूखा जा रहा है शरीर कांप रहा है तथा रोमांच हो रहा है।

नोट--

यह कहना कि युद्धभूमि में अर्जुन को मोह हो गया, उसके दिल की धड़कन बढ़ गयी और उसने गांडीव फेंक दिया, बिल्कुल झूठा है। गीता की ये बातें अर्जुन की वीरता पर कलंक हैं। वास्तव में गीताकार ऐसी कल्पना न करता तो गीता की रचना कैसे होती?

देखो! लाक्षागृह से बच निकलने पर लाक्षागृह में पांडवों को जीवित भस्म कर देने की कौरवों की गंदी योजना ने अर्जुन के दिल में कौरवों के प्रति घोर द्वेष उत्पन्न कर दिया था। जुआ में छल से राज्य छीन लेने और सभा में द्रोपदी का अपमान देखकर उसने कौरवों को प्राणदंड देने की शपथ ली थी। युद्ध करने के लिए उसकी भुजाएं फड़क रही थीं।

माता कुन्ती के जोशीले संदेश ने अर्जुन द्वारा कौरवों के विनाश के संकल्प में घी का काम किया होगा। कौरवों द्वारा युद्ध की चुनौती ने कौरवों को मार डालने के संकल्प को और दृढ़ कर दिया होगा। युद्ध भूमि में कौरवों को सामने देखकर अर्जुन का खून खौलने लगा होगा। और वह कौरवों को मार डालने के लिए उन पर शेर की तरह टूट पड़ा होगा।

(८) गीता १।२८ के अनुसार युद्ध भूमि में सामने स्वजनों को देखकर अर्जुन को मोह हो गया था।

नोट--

मैं पूछता हूँ क्या अर्जुन के लिए कौरवों से युद्ध का यह पहला अवसर था? नहीं। इससे पहले भी तो वह विराट नगर में राजा विराट की गौ-हरण के समय कौरवों से भयंकर युद्ध कर चुका था। उस समय उसे मोह क्यों नहीं हुआ था?

(९) अर्जुन बोले--

कथं भीष्मं अहं संख्ये, द्रोणं च मधुसूदन ।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि, पूजार्हा अरिसूदन ।। गीता २/४

अर्थात् हे मधुसूदन! मैं रणभूमि में किस प्रकार बाणों से भीष्म पितामह

और द्रोणाचार्य के विरुद्ध लडूँगा? क्योंकि हे अरिसूदन! वे दोनों ही पूज्य है।

नोट--

क्या अर्जुन का भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य से युद्ध करना नई बात होगी? अर्जुन ने भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य से पहले भी युद्ध किया था और विराट नगर में इन दोनों को युद्ध में घायल कर दिया था--

अर्जुन के बाणों से द्रोण के कवच और ध्वज छिन्न-भिन्न हो गये। वह घायल हो गये। इसलिए मौका पाकर युद्धस्थल से भाग निकले।

(महा० वि०प०५८।७६)

तत्पश्चात अर्जुन ने भीष्म की छाती में १० बाण मारकर गहरी चोट पहुँचाई। उससे पीड़ित होकर भीष्म रथ का कूबर पकड़ निश्चेत बैठ गये। ऐसी दशा में सारथी रथी की रक्षार्थ उपदेश को स्मरण करके भीष्म को संग्राम भूमि से दूर हटा ले गया।

(महा०वि०प०६४।४७--४६)

(१०) अर्जुन दृढ़ प्रतिज्ञ था। उसने प्रतिज्ञा की थी- जो कहेगा कि गाण्डीव फेंक दो या दूसरे को देदो तो मैं उसका सिर काट दूँगा (मार डालूँगा)। संयोग से परीक्षा की विचित्र घड़ी आ गई। अर्जुन को युधिष्ठिर ही पर शस्त्र उठाना पड़ा। परन्तु मौके पर कृष्ण ने उसे समझा-बुझाकर युधिष्ठिर की प्राण रक्षा की। घटना इस प्रकार हुई--

युद्ध में कर्ण द्वारा अधिक घायल होने पर युधिष्ठिर विश्राम के लिए शिविर में चले आये। युधिष्ठिर का समाचार जानने के लिए अर्जुन भी युद्ध छोड़कर शिविर में आ पहुँचे। अर्जुन को देखकर युधिष्ठिर ने पूछा- "क्या कर्ण मार दिया गया?" अर्जुन ने कहा- "नहीं।" युधिष्ठिर ने कहा- "तुमसे कर्ण का वध नहीं होता तो गाण्डीव दूसरे को दे दो।" इतना सुनते ही अर्जुन ने झट तलवार निकाल लिया और युधिष्ठिर को मारना चाहा, किन्तु कृष्ण ने तुरन्त रोकते हुए कहा- "बड़े भाई का अपमान कर देना उनको मारने के समान है।" इस प्रकार अर्जुन ने प्रतीज्ञा की रक्षा की।

-महा० कर्ण पर्व अ० ६६

नोटः-

जिसे अपनी प्रतीज्ञा को पालन के लिए अपने बड़े भाई धर्मराज युधिष्ठिर

पर शस्त्र उठाने में जरा भी हिचक नहीं हुआ, उसके लिए यह कहना कि पापी कौरवों को युद्ध के लिए सामने देखकर मोह हो गया, अपनी अज्ञानता का परिचय देना है और कोई भी विवेकी व्यक्ति इसे सत्य नहीं मान सकता है, गीता के अन्धभक्तों की बात दूसरी है।

(११) जब युद्ध भूमि में दोनों सेनाओं (कौरव-पांडव) की ओर से युद्ध के बाजे बज गये और स्वयं अर्जुन भी अपना देवदत्त नामक शंख बजाकर तैयार हो गये (गीता १/१५) फिर यह कहना कि अर्जुन को मोह हो गया अप्रासंगिक एवं मिथ्या है।

(१२) यह कैसे संभव है कि कौरव-पांडव की सेनाएं परस्पर युद्ध के लिए मोरचे पर खड़ी हों तो अर्जुन और कृष्ण दोनों सेनाओं के मध्य गीता के १८ अध्यायों की बहस करने लगे और वह भी दोनों ओर से युद्ध के बाजे बज जाने पर? फिर युद्ध के समय बहस करने का इतना समय कौन देता है?

(१३) क्या अर्जुन कौरवों के विनाश करने की अपनी प्रतिज्ञा भूल गया था? क्या अर्जुन संजय द्वारा कौरवों को दिया गया अपना संदेश भूल गया था? क्या अर्जुन कोकौरवों द्वारा युद्ध की चुनौती भी याद नहीं रहा? यदि अर्जुन ये सब बातें भूल गया था तो कृष्ण ने उसे इन सब बातों की याद क्यों नहीं दिलाई? क्या ये सब बातें याद दिलाना अनुचित एवं अनुपयुक्त था?

वास्तव में अर्जुन को मोह नहीं हुआ था, अन्यथा यदि अर्जुन को मोह हुआ होता तो कृष्ण उपर्युक्त बातें अवश्य याद दिलाते। जैसा कि हम देखते हैं अर्जुन का भीष्म के साथ नरमी से युद्ध करने पर कृष्ण उसे प्रतिज्ञा की याद दिलाते हुए कहते हैं- "जिसकी तुम दीर्घकाल से प्रतीक्षा कर रहे थे वही सुअवसर आया है। वीर पहले भी तुमने राजाओं की सभा में यह प्रतिज्ञा की थी कि जो मेरे साथ युद्धभूमि में लड़ेंगे दुर्योधन के उन भीष्म, द्रोण आदि सभी सैनिकों को मार डालूँगा। अर्जुन! इस प्रतिज्ञा को सत्य कर दिखाओ।"

—महा० भीष्म पर्व ४२/४५

(१४) गीता ४/१-५ कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-- 'मैंने इस अविनाशी योग को सूर्य से कहा था, सूर्य ने अपने पुत्र मनु से कहा, मनु नें इक्ष्वाकु

से कहा। परम्परा से प्राप्त इस योग को राजर्षियों ने जाना किन्तु बहुत काल से यह योग पृथ्वी पर नष्ट हो गया था, आज मैं तुम्हें बताता हूँ।'

नोटः-

यदि अर्जुन को मोह हुआ था तो कृष्ण उसे उसकी प्रतिज्ञा क्यों नहीं याद कराते हैं? कुन्ती का सन्देश क्यों नहीं बताते हैं? कौरवों की चुनौती याद दिलाना क्या अनुचित था? जिन बातों से अर्जुन-मोह का कोई संबंध नहीं ऐसी इधर-उधर की ऊटपटांग बिना सिर-पैर की बातें क्यों बताते हैं?

(१५) वास्तव में मोह अर्जुन को नहीं युधिष्ठिर को हुआ था और स्वयं अर्जुन ने युधिष्ठिर को समझाकर उनका मोह नष्ट किया था। अर्जुन ने माता कुन्ती और महात्मा विदुर के वचनों की याद दिलाकर युधिष्ठिर को युद्ध के लिए प्रेरित किया था।

युद्ध को न टलते देखकर युधिष्ठिर कहते हैं—

यदर्थं वनवासश्च प्राप्तं दुःखं च यन्मया ।
सोऽयमस्मानुपैत्येव परोऽनर्थः प्रयत्नतः ।।

—महा० उ० प० १५४।२०

जिससे बचने के लिए मैंने वनवास का कष्ट स्वीकार किया वही महान् अनर्थ हम लोगों पर आ रहा है।

युधिष्ठिर को समझाते हुए अर्जुन कहते हैं—

उक्तवान् देवकीपुत्रः कुन्त्याश्च विदुरस्य च ।
वचनं तत् त्वया राजन् निखिलेनावधारितम् ।।
न च तौ वक्ष्यतोऽधर्ममिति मे नैष्ठिकी मतिः ।
नापि युक्तं च कौन्तेय निवर्तितुमयुध्यतः ।।

-महा० उ० प० १५४।२४,२५

अर्थात् राजन्! देवकीनन्दन श्रीकृष्ण ने माता कुन्ती तथा विदुर जी के कहे हुए वचन जो आपको सुनाये थे, उनपर आपने पूर्णरूप से विचार किया होगा। मेरा तो निश्चित मत है कि दोनों अधर्म की बात नहीं कहेंगे। कुन्तीनन्दन! अब हमारे लिए युद्ध से निवृत्त होना उचित नहीं है।

(१६) जिस प्रकार युधिष्ठिर को मोह हुआ था तो अर्जुन ने उन्हें समझाया था, उसी प्रकार यदि अर्जुन को मोह हुआ होता तो युधिष्ठिर उसे जरूर समझाते

क्योंकि क्रिया की प्रतिक्रिया होती है।

यदि अर्जुन को मोह हुआ होता तो भले ही कृष्ण ने उसे उसकी प्रतिज्ञा आदि बातें याद नहीं दिलाये लेकिन युधिष्ठिर उसे अवश्य ये सभी बातें याद दिलाते और समझाते कि भाई! अभी तो तुम मेरे मोह होने पर मुझे समझा रहे थे अब तुझे क्या हो गया?

(१७) कृष्ण कहते हैं—

योगी भवार्जुन (गीता ६।४६)

अर्थात् हे अर्जुन! तू योगी होजा।

नोट—

गीताकार को मात्र एक ही उन्माद सवार था कि किसी प्रकार कृष्ण पंथ चले। इस धुन में वह इतना दीवाना हो चुका था कि युद्ध-क्षेत्र में खड़े अर्जुन को योद्धा के स्थान पर योगी बनाने लगा।

(१८) युधिष्ठिर के राज्यारोहण के पश्चात् कृष्ण के द्वारिका प्रस्थान करते समय अर्जुन कहते हैं- "हे कृष्ण मैं गीता का उपदेश भूल गया हूँ, पुनः सुनाइये।" कृष्ण उत्तर देते हैं- "हे अर्जुन! उस समय मैं योगयुक्त होकर वह ज्ञान दिया था, तुमने उसे अपनी नासमझी से भुला दिया। अब मुझे भी वह ज्ञान पूरा-पूरा याद नहीं है। निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन और मंदबुद्धि हो।"

—महा० अश्वमेधिक पर्व १६/६-१३

नोटः-

यदि कृष्ण ने गीता का उपदेश दिया था तो बताओ जो कृष्ण करोड़ों वर्ष पूर्व दिये गये अपने उपदेश को याद रख सके थे (गी०४।१०५) तो कुछ दिनों पूर्व दिये गये अपने उपदेश को कैसे भूल गये? जब स्वयं भूल गये तो अर्जुन को भूल जाने पर उसे भला-बुरा क्यों कहने लगे? और यदि कृष्ण युद्ध-क्षेत्र में योगयुक्त हो सकते थे तो शान्ति के समय एकान्त में क्यों नहीं योगयुक्त हो गये?

(१९) न अर्जुन को मोह हुआ था और न कृष्ण ने उसे कोई उपदेश ही दिया था। गीताकार का उद्देश्य कुछ और था। उसे तो 'कृष्ण पंथ' चलाना अभीष्ट था। उसने गीता के १८ अध्यायों में कृष्ण-अर्जुन संवाद के रूप में

यही कुचक्र चलाया है। उसने कृष्ण को ईश्वर का अवतार बताकर (गीता ४/६-९, १७, ८/१३, १६) तथा गीता द्वारा मुक्ति का प्रलोभन दिलाकर (गीता ८/५, ६/३०, १०/३, १८/६६) भोली-भाली जनता को गुमराह करके अपने जाल में फँसाया है। इतने पर भी जो उसके जाल में न फँसे उन्हें कृष्ण के मुख से गालियां दिलाया है।

(२०) महाभारत में प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर 'इति महाभारते' शब्द लिखा मिलता है परन्तु गीता में 'इति श्रीमद्भगवद्गीतासु' शब्द लिखा मिलता है। इसका मतलब है कि गीता महाभारत का मौलिक अंश नहीं है, प्रक्षिप्त अंश है। यह उसी तरह से है जैसे चोर की दाढ़ी में तिनका।

(२१) राजा भोज ने संजीवनी नामक इतिहास में लिखा है कि व्यास जी ने ४ हजार ४ सौ और उनके शिष्यों ने ५ हजार ६ सौ श्लोकयुक्त अर्थात् कुल १० हजार श्लोकों में महाभारत बनाया था। वह महाराजा विक्रमादित्य के समय में २० हजार, राजा भोज कहते हैं कि मेरे पिता के समय में २५ हजार और मेरी आधी उमर में ३० हजार श्लोकयुक्त महाभारत ग्रंथ मिलता है। जो ऐसे ही प्रक्षेप किया जाता रहा तो एक समय महाभारत एक ऊँट का बोझा हो जायेगा।" —सत्यार्थ प्रकाश, समु० ११

नोट—

इस समय महाभारत में १ लाख से भी अधिक श्लोक हैं। अतः सिद्ध है कि समय-समय पर जो भी चाहा मनमानी बातें गढ़कर महाभारत में मिला दिया। महाभारत में बड़ी मिलावटें हुई हैं जिनमें गीता भी एक है।

(२२) सहजानंद ने कहा—

'वेद, व्यास सूत्र, भागवत पु०, (महाभारत में कहा हुआ) विष्णु सहस्त्रनाम, भगवद्गीता, विदुर नीति, (स्कन्द पु० और वैष्णव खंड में कहा हुआ) वासुदेव माहात्म्य और (धर्मशास्त्रों में) याज्ञवल्क्य स्मृति आदि ८ सच्छास्त्रों का प्रमाण मुझे अभीष्ट है।"—शिक्षापत्री श्लोक ९३-९५

महर्षि दयानन्द द्वारा खंडन—

भागवतादि पुराण, महाभारत में विष्णु सहस्त्रनाम और भगवद्गीता आदि का ही प्रमाणार्थ स्वीकार करना तथा दूसरे श्रेष्ठ ग्रंथों का त्याग। वासुदेव माहात्म्य,

याज्ञवल्क्य स्मृति की मिताक्षरी टीका का ही ग्रहण, पूर्व मीमांसादि शास्त्रों का तथा मनुस्मृति का त्याग करने से सिद्ध होता है किसहजानन्द अविद्वान था।

—शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण

नोट-

यहाँ सहजानन्द द्वारा गिनाये गये ८ ग्रंथों में ऋषि ने वेद, व्यास सूत्र और विदुर नीति को छोड़कर गीता सहित सभी ग्रंथों का खंडन किया है।

(२३) महर्षि दयानन्द गीता को त्रिदोष का सन्निपात बतलाते थे और कहते थे कि उनमें कहीं तो जीव और ब्रह्म का एकत्व प्रतिपादित किया है और कहीं उनका पृथकत्व देखने में आता है।

बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय कृत महर्षि दयानन्द चरित्र,भाग २ पृ० २०३

(२४) स्वामी जी ने कहा कि गीता प्रामाणिक नहीं है। हम गीता को प्रामाणिक नहीं मानते।

—पं० लेखराम कृत स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र, पृ० ५५०

शंकाः- महर्षि दयानन्द ने महाभारत को प्रामाणिक माना है और गीता महाभारत का अंश है। अतः गीता की प्रामाणिकता स्वयं सिद्ध है। गीता का अलग से नामोल्लेख करने की आवश्यकता नहीं थी।

समाधानः- गीता महाभारत का प्रक्षिप्त अंश है। यदि गीता का अलग से नामोल्लेख करने की आवश्यकता नहीं थी तो विदुर प्रजागर और शान्तिपर्व का नामोल्लेख क्यों किया? ये भी तो महाभारत के अंश हैं।

तिथी
पु०सं०
भारती पुस्तकालय

उत्तरार्द्ध

उत्तरार्द्ध

गीता वेद-विरुद्ध है

श्रीमद्भगवद्गीता वेद विरुद्ध है। गीता में वेद निन्दा, नारी निन्दा, यज्ञ निन्दा, योग निन्दा एवं अवतारवाद हैं। इसमें आत्मा और परमात्मा की भ्रमात्मक व्याख्या, निष्काम कर्म का मिथ्या सिद्धान्त, पापों के फल से मुक्ति के नुस्खें और हमेशा के लिए मुक्ति का प्रलोभन हैं।

देखिये—

(१) वेद निन्दा

(क) त्रैगुण्य विषया वेदा, निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो, निर्योगक्षेम आत्मवान् ।।गी०२/४५

अर्थ- हे अर्जुन! वेद ३ गुणों (सत्त्व, रज, तम) के कार्य रूप समस्त भोगों एवं उनके साधनों का प्रतिपादन करने वाले हैं। तुम उनमें आसक्तिहीन, हर्ष-शोकादि द्वन्द्वों से रहित, नित्य परमात्मा में स्थित, योग क्षेम को न चाहने वाला हो।

समीक्षाः— लगता है गीताकार ने वेदों की शकल भी नहीं देखी थी, अन्यथा वह ऐसा कदापि न लिखता। यदि वह वेद पढ़ा होता तो उसे वेदों में सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान को प्रतिपादित करने वाले मंत्र मिल जाते।

गीताकार का निर्योग क्षेम (योग क्षेम को न चाहने वाला हो) लिखना वेद विरुद्ध है, क्योंकि वेद कहता है-

योगक्षेमो नः कल्पताम् ।।यजु० २/२२
अर्थात् अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की सुरक्षा हो।

(ख) यावनार्थ उदपाने, सर्वतः सम्प्लुतोदके ।
तावान् सर्वेषु वेदेषु, ब्राह्मणस्य विजानतः ।। गी० २/४६

अर्थ- जैसे बड़े जलाशय को प्राप्त होने पर छोटे जलाशय से जितना

प्रयोजन रहता है, वैसे ही गीता को जान लेने पर वेद से उतना ही प्रयोजन रहता है।

समीक्षाः- गीताकार ने वेद को छोटा जलाशय तथा गीता को बड़ा जलाशय बताकर वेद की निन्दा किया है। चूंकि नास्तिको वेद निन्दकः। (मनु०) अर्थात् जो वेद की निन्दा करता है वह नास्तिक है। इसलिए वेद की निन्दा करने से गीताकार भी नास्तिक था।

(२) नारी निन्दा

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य, येऽपि स्युः पापयोन्नयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्राः, तेऽपि यान्ति परां गतिम् ।। गी० ६/३२

अर्थ- हे पार्थ! स्त्री, वैश्य तथा शूद्र जो पाप योनि हैं वे भी मेरी शरण में आकर परम गति (मोक्ष) को प्राप्त होते हैं।

समीक्षाः- स्त्री, शूद्र तथा वैश्य को पापयोनि बताना गीताकार का उनके प्रति अन्याय एवं अक्षम्य अपराध है।

देखिये वेद कहता है-

अहं केतुः मूर्धाहं, अहमुग्रा विवाचनी ।
ममेदनु क्रतुं पतिः, सेहानाया उपाचरेत् ।।
अर्थात् नारी राष्ट्र का केतु (झंडा) है।
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्, बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः, पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ।। यजु०३१।११

अर्थात् राष्ट्र रूपी शरीर का पेट वैश्य तथा पैर शूद्र है।

(३) यज्ञ निन्दा

अहं क्रतुरहं यज्ञः, स्वधाहं अहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहं अहमेवाज्यं, अहंअग्निरहं हुतम् ।। गी० ६/१६

अर्थ- कर्मकाण्ड मैं हूँ, यज्ञ मैं हूँ, औषधि मैं हूँ, मंत्र मैं हूँ, घृत मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ, आहुति भी मैं हूँ।

समीक्षाः- यहाँ गीताकार ने कृष्ण को यज्ञ बताकर अप्रत्यक्ष रूप से
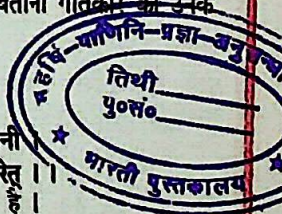
यज्ञ की निन्दा किया है।

वैदिक धर्म में यज्ञ जीवन की आधारशिला है। प्रत्येक कर्मकाण्ड, प्रत्येक संस्कार तथा प्रत्येक शुभ कार्य यज्ञ से ही शुरू होता है।

शास्त्र कहता है- यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्मः। (तै. ब्रा.)

अर्थात् यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। इससे बड़ा कोई कर्म नहीं।

वेद कहता है- अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः। (यजु० २३/६२)

अर्थात् यह यज्ञ संसार की नाभि है। जिस प्रकार नाभि (Umblicus) द्वारा गर्भस्थ शिशु का पोषण होता है उसी प्रकार यज्ञ द्वारा सारे संसार का (जड़ एवं चेतन सभी का) पोषण होता है।

(४) योग निन्दा

(क) ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजेन्देहं, स याति परमं गतिम् ।।गी० ८/१३

अथात (कृष्ण कहते हैं) जो एक अविनाशी ब्रह्म ओऽम् का जप करता हुआ, मेरा चिन्तन करता हुआ शरीर त्यागकर जाता है, वह परम गति को प्राप्त होता है।

समीक्षाः- यहाँ गीतकार ने कृष्ण को ओऽम् वाची ब्रह्म बताकर योग की निन्दा की है। देखो! 'योग' शब्द का अर्थ है जोड़। गणित के विषय में योग का अर्थ अंको का जोड़ है और ईश्वरोपासना के सम्बन्ध में आत्मा और परमात्मा का मिलन। वेद कहता है-

ओऽम् क्रतो स्मरः (यजु० ४०।१५) ओऽम् का जप करो तो गीताकार ने चालाकी की और कृष्ण को ही ओऽम् बता दिया।

(ख) योगः कर्मसु कौशलम् ।।गी० २/५०

अर्थात् कर्म करने की कुशलता ही योग है।

समीक्षाः- आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् डा० श्रीराम आर्य ने लिखा है—

"यदि गीता के योग की परिभाषा को सत्य स्वीकार किया जायेगा तो

तालाब में मछली पकड़ने में दक्ष बगुला, जेब काटने में दक्ष गिरहकट, डाका डालने में दक्ष डकैत आदि सभी योगी हो जायेंगे। 'योग' शब्द की यह कैसी मजाक है? देखो! शास्त्र में लिखा है- योगः चित्तवृत्ति निरोधः (यो० द० १।२)

अर्थात् चित्त (मन) की वृत्तियों का निरोध करके आत्मा को परमात्मा की उपासना में लगाना योग कहलाता है।"

गीता विवेचन

(५) अवतारवाद

(i) अजोऽपि सन् अव्ययात्मा, भूतानां ईश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वां अधिष्ठाय, संभवामि आत्ममायया ।।गी० ४/६

अर्थात् (कृष्ण कहते हैं) मैं अजन्मा और अविनाशी होते हुए भी तथा सभी प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके योगमाया से अवतार लेता हूँ।

(ii) यदा यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानं अधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम् ।। गी० ४/७

अर्थात् हे भारत! जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतार लेता हूँ।

(iii) परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय, संभवामि युगे युगे ।।गी० ४/८

अर्थात् सज्जनों की रक्षा, दुर्जनों का विनाश और धर्म की स्थापना के लिए मैं प्रत्येक युग में अवतार लेता हूँ।

(iv) पिता अहमस्य जगतो, माता धाता पितामहः ।
वद्य पवित्र आकार, ऋक्साम यजरव च ।।गी० ६/१७

अर्थात् इस जगत् का धारण करने वाला, माता, पिता, पितामह, ओऽम् एवं ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ।

(v) ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजेन्देहं, स याति परमं गतिम् ।।गी० ८/१३

अर्थात् जो व्यक्ति ओऽम् इस एक अविनाशी ब्रह्मरूप मुझको

चिन्तन करता हुआ शरीर त्याग देता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है।

(vi) आब्रह्मभुवनाल्लोकाः, पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।
मामुपेत्य तु कौन्तेय, पुनर्जन्म न विद्यते ।।गी० ८/१६

अर्थात् हे अर्जुन! ब्रह्मलोक पर्यन्त सब लोक पुनरावर्ती हैं, परन्तु हे कौन्तेय! मुझको प्राप्त होने पर पुनर्जन्म नहीं होता।

(vii) न मां दुष्कृतिनो मूढाः, प्रपद्यन्ते नराधमाः ।
मायया अपहृतज्ञाना, आसुरं भावमाश्रिताः ।।गी० ७/१५

अर्थात् माया के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे आसुर-स्वभाव वाले दुष्ट, नीच एवं मूर्खलोग मुझको नहीं भजते।

(viii) अवजानन्ति मां मूढाः, मानुषीं तनुमाश्रितम् ।
परं भावं अजानन्तो, मम भूतमहेश्वरम् ।।गी० ९/११

अर्थात् मेरे परम भाव को न जानने वाले मूर्खलोग मनुष्य देहधारी जीवों के ईश्वर मुझको तुच्छ समझते हैं।

समीक्षाः- वेद के अनुसार ईश्वर अवतार नहीं लेता। क्योंकि वेद कहता है—

ओऽम् खं ब्रह्म। (यजु० ४०/१७) ईश्वर सर्वव्यापक है।

न तस्य प्रतिमास्ति। (यजु० ४०।८) उसकी मूर्ति नहीं है।

वह अज[1] एवं अकाय[2] है। ईश्वर का नाम ओऽम् है। ओऽम् का जाप करो- ओऽम् क्रतो स्मर।(यजु० ४०।१५)

लेकिन वेद के विरुद्ध गीता कहती है कि ईश्वर अवतार लेता है। कृष्ण ईश्वर थे (गी० ४/६) जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब-तब कृष्ण अवतार लेते हैं (गी० ४/७) और साधुओं की रक्षा तथा दुष्टों का संहार करते हैं (गी ४/८) कृष्ण ही संसार के मालिक हैं (गी० ९/१७) कृष्ण ही ओऽम् हैं और वही मुक्तिदाता हैं। (गी० ८/१३)

---

१. शं नो अज एकपाद देवो।।(ऋ० ७।३५।१३)

२. स पर्यगाच्छुक्रमकायम्।।(यजु० ४०।८)

कृष्ण ही सच्ची मुक्ति देने वाले हैं। (गी० ८/१६)

इतना ही नहीं गीताकार महानीच था। उसने कृष्ण को ईश्वर न मानने वालों तथा कृष्ण को न भजने वालों को गालियां दिया है। (गी० ६/११ एवं ७/१५)

(६) आत्मा और परमात्मा की भ्रमात्मक व्याख्या

(i) अच्छेद्योऽयं अदाह्योऽयं, अक्लेद्योऽशोष्य एव च ।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुः, अचलोऽयं सनातनः ।।गी० २/२४

अर्थात् यह आत्मा अच्छेद्य, अदाह्य, अक्लेद्य और अशोष्य है। यह नित्य, सर्वव्यापक, अचल, स्थिर एवं सनातन है।

समीक्षाः- आत्मा नित्य एवं सनातन है लेकिन सर्वव्यापक एवं अचल नहीं है।

वेद कहता है- खं ब्रह्म। (यजु. ४०/१७)

अर्थात् ईश्वर सर्वव्यापक है। वह सब जगह विद्यमान है। उसे कहीं आने-जाने की आवश्यकता नहीं। इसलिए ईश्वर ही अचल एवं स्थिर है।

गीताकार की दृष्टि में आत्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।लेकिन आत्मा सर्वव्यापक और अचल नहीं है; क्योंकि ऐसा होता तो जड़ पदार्थो में भी आत्मा मौजूद होता और कुर्सी, मेज आदि चेतन की तरह व्यवहार करते।

कुछ विद्वान सर्वगतः का अर्थ सभी जगहों में जाने वाला करते हैं। मैं पूछता हूँ कि क्या आत्मा जड़ पदार्थों में भी जा सकता है? यदि आत्मा अचल होता तो उसका पुनर्जन्म भी नहीं होता। फिर जगत का खेल ही खत्म हो जाता।

वास्तव में जीवात्मा एकदेशीय और चल है। गीता से भी इस बात की पुष्टि होती है—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि, अन्यानि संयाति नवानि देही ।।
गी० २/२२

अर्थ- जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र को त्यागकर दूसरे नये वस्त्र को धारण करता है, वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्याग कर दूसरे नये शरीर को प्राप्त होता है।

(ii) उपद्रष्टा अनुमन्ता च, भर्त्ता भोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मा इति चाप्युक्तो, देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ।। गी० १३/२२

अर्थात् इस देह में स्थित यह आत्मा वास्तव में परमात्मा ही है। वही साक्षी होने से उपद्रष्टा और यथार्थ सम्मति देने वाला होने से अनुमन्ता, सबका भरण-पोषण करने वाला होने से भर्त्ता, जीव रूप से भोक्ता, ब्रह्मा आदि का स्वामी होने से महेश्वर और शुद्ध सच्चिदानन्द घन होने से परमात्मा-ऐसा कहा गया है।

समीक्षाः- यहाँ गीताकार ने खुले शब्दों में आत्मा और परमात्मा को एक ही बताया है।

(iii) ममैवांशो जीवलोके, जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि, प्रकृतिस्थानि कर्षति ।।गी० १५/७

अर्थात् इस देह में यह सनातन जीवात्मा मेरा ही अंश है और वही इस प्रकृति में स्थित मन और पांचों इन्द्रियों को आकर्षण करता है।

समीक्षाः- यहाँ गीतकार ने आत्मा को परमात्मा का अंश माना है, अर्थात् उसकी दृष्टि में आत्मा की स्वतंत्र सत्ता नहीं है।

मैं पूछता हूँ कि परमात्मा के सामने ऐसी कौन सी मुसीबत आ पड़ी थी कि उसे अपने स्वरूप को टुकड़ों में विभक्त करना पड़ा? अथवा किसी परमात्मा को खंड-खंड कर जीवों की उत्पत्ति की?

विज्ञान का सिद्धान्त है कि अंश में अंशी के गुण होते हैं परन्तु जीवात्मा में परमात्मा के गुण (सर्वज्ञता, सर्वशक्तिमत्ता आदि) क्यों नहीं हैं? यदि जीव ईश्वर का अंश है तो जीव भी छोटा ईश्वर हुआ। फिर ईश्वर (कृष्ण) ने छोटे ईश्वरों (जीवों) को मूर्ख आदि कहकर क्यों फटकारा? ईश्वर ने छोटे ईश्वरों को जन्म-मरण के बखेड़ा में क्यों फँसा रखा है? जैसे घड़े के आकाश घड़े फूटने पर व्यापक आकाश में मिल जाते हैं वैसे ही शरीर त्यागते ही छोटे

ईश्वर बड़े ईश्वर में क्यों नहीं मिल जाते हैं?

देखो! आत्मा परमात्मा एक नहीं है। और आत्मा को परमात्मा का अंश बताना भी गलत है। आत्मा और परमात्मा अलग-अलग हैं तथा उनकी स्वतंत्र सत्ता है। इतना ही नहीं, इन दोनों के अलावा एक और तीसरी सत्ता है जिसे प्रकृति कहते हैं।

ईश्वर, जीव और प्रकृति-यही वैदिक त्रैतवाद है। प्रमाण—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति, अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

—ऋग्वेद १/१६४/२०

अर्थात् इस प्रकृति रूपी वृक्ष पर जीवात्मा और परमात्मा रूपी दो पक्षी विराजमान हैं। जीवात्मा उसके फलों का भोक्ता है तथा परमात्मा साक्षी मात्र है।

ईश्वर, जीव और प्रकृति— ये तीन जगत के अनादि कारण हैं। ईश्वर निमित्त कारण है जिसके बनाने से जगत बना है। दूसरे शब्दों में ईश्वर जगत् का कर्त्ता-धर्त्ता-संहर्त्ता है। जीव प्रयोजन कारण है, जिसके लिए जगत् बना है और प्रकृति उपादान कारण है, जिससे जगत् बना है।

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप है। जीव सत् चित्त और प्रकृति सत् है। सत् उसे कहते हैं जिसकी सत्ता है, चित्त उसे कहते हैं जिसमें चेतनता है, और आनन्द जिसमें आनन्द ही आनन्द है। ईश्वर एक, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है। जीव अनेक, एकदेशीय और अल्पज्ञ हैं। प्रकृति सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणुओं (जिनका विभाजन नहीं हो सकता) की साम्यावस्था का नाम है। प्रकृति जड़ है। प्रकृति से अवस्थान्तर होकर जगत बनता है। जगत अर्थात् ज=बनने वाला और गत=विगड़ने वाला। जीव कर्म करने में स्वतंत्र है परन्तु ईश्वर की व्यवस्थानुसार कर्मफल भोगने में परतंत्र है।

(७) निष्काम कर्म का सिद्धान्त

कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूः, मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ।। गी० २/४७

तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फल में कभी नहीं। इसलिए

तू कर्मफल की इच्छा मत करो, तू केवल कर्म करो।

समीक्षाः— आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान् डा० श्रीराम आर्य ने लिखा है—

गीता का मुख्य विषय निष्काम कर्म की शिक्षा माना जाता है और इस श्लोक को गीता का सार कहा जाता है। गीता कहती है कर्म करो लेकिन फल की इच्छा मत करो। गीता की यह बात बिल्कुल गलत है। क्योंकि-

मनुष्यः कस्मात्? मत्वा कर्माणि सीव्यति । निरुक्त ३/७

मनुष्य कौन है? मनुष्य वह है जो विचार कर कार्य करे।

विचारशील (मननशील) को ही मनुष्य कहते हैं। मनुष्य अपनी बुद्धि से सफलता, असफलता का विचार कर लाभ-हानि का हिसाब लगाकर, भला-बुरा परिणाम को सोचकर ही किसी कार्य में हाथ लगाता है। इसीलिए एक कहावत है—

बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताय।

एक बात और है-

दूर दृष्टि, पक्का इरादा, कड़ी मेहनत।

अर्थात् दूर दृष्टि= कार्य के भले-बुरे का विचार

पक्का इरादा= बार-बार प्रयत्न करके फल को प्राप्त करने का संकल्प

कड़ी मेहनत = लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कठिन परिश्रम करना।

चूँकि गीता कर्मफल की इच्छा करने को मना करती है। इसलिए गीता का सिद्धान्त व्यावहारिक कदापि नहीं है, केवल तमाशा है। मैं पूछता हूँ क्या ऐसा कोई भी मनुष्य है जो कार्य करता हो किन्तु फल (परिणाम) न सोचता हो? नहीं। मनुष्य की बात तो दूर एक चींटी भी कहीं मीठी चीज पा जाती है तो सीधे अपने बिल की ओर ही घसीटकर ले जाती है। उसके दिमाग में भी यह बात होती है कि उसे इस वस्तु को अपने बिल में ले चलना है।

एक विद्यार्थी परीक्षा पास करने का संकल्प लेकर विद्याध्ययन करता है। उसके सामने डाक्टर, इंजिनीयर, वकील आदि बनने का लक्ष्य होता है। यदि सेना शत्रु पर रामआसरे अन्धाधुन्ध बिना लक्ष्य के गोलियां चलाये तो क्या वह सफल होगी? कदापि नहीं।

निष्काम कर्म तो स्वयं कृष्ण ने भी नहीं किया था गीता के अनुसार जिनका यह उपदेश है। वे महाभारत युद्ध रोकने की कामना से ही पांडवों के सन्धि प्रस्ताव को लेकर हस्तिनापुर गये थे। शिशुपाल का वध करने के लिए ही शस्त्र चलाये थे। कंस का बध करने के लिए ही उसे गद्दी से खींचकर प्रहार किये थे। जरासंध से झगड़ा बचाने के लिए ही गोकुल से द्वारिका चले गये थे। कौरवों का विनाश करने के लिए ही अर्जुन के रथ की बागडोर पकड़े थे।"

—गीता विवेचन

निष्काम कर्म का सिद्धान्त वेद विरुद्ध है—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।।
ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।।

अर्थात् भक्त ईश्वर से प्रार्थना इस कामना से करता है कि प्रभु उसकी बुद्धि को बढ़ायें, दुर्गुण दूर करें और सद्गुण प्राप्त करायें।

(८) पापों के फल से मुक्ति के नुस्खें

गीताकार ने पापों के फल से मुक्ति के ४ नुस्खें लिखे हैं—

(क) यो मां अजं अनादिं च, वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असंमूढः स मर्त्येषु, सर्वपापैः प्रमुच्यते।। गी०१०।३

अर्थात् जो मुझे अन्जमा, अनादि तथा लोकों का महान् ईश्वर जानता है; वह मनुष्यों में ज्ञानवान, पुरुष सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

(ख) अन्तकाले च मामेव, स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं, याति नास्ति अत्र संशयः।। गी० ८/५

अर्थात् जो व्यक्ति मुझे ही स्मरण करता हुआ अन्त में शरीर को त्याग देता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूप को प्राप्त होता है (उसे मुक्ति मिल जाती है)। इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

(ग) सर्वधर्मान्परित्यज्य, मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो, मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।। गी० १८/६६

सब धर्मों (कर्मों) को छोड़कर मेरी शरण में आओ, मैं तुझे सभी पापों से मुक्त कर दूँगा; शोक मत करो।

(घ) य इमं परमं गुह्यं, मद्भक्तेषु अभिभास्यति ।
भक्तिं मयि परां कृत्वा, मां एवेषु अति असंशयः ।। गी० १८/६८

जो व्यक्ति मुझसे परम प्रेम करके, इस परम रहस्ययुक्त गीता को मेरे भक्तों में कहेगा (गीता का प्रचार करेगा), वह मुझको ही प्राप्त होगा। इसमें कोई संदेह नहीं है।

समीक्षाः-'सैयां भये कोतवाल, अब डर काहेको।'

जब पाप माफ की गारंटी गीता ने देदी तो पाप करने से कौन डरेगा? गीताकार ने पाप से मुक्ति के नुस्खें भी बता दिये हैं (जैसे पुराणकारों ने बताये हैं)। लेकिन सावधान!

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।

कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ेगा।

पक्वं पक्वः पुनरा विशाति। अथर्ववेद

जैसी करनी, तैसी भरनी।

(६) हमेशा के लिए मुक्ति

मां उपेत्य तु कौन्तेय, पुनर्जन्म न विद्यते।।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं मम्।।
गी० ८/१६; १५/६

कृष्ण लोक को प्राप्त होने पर पुनर्जन्म नहीं होता (फिर कभी नहीं लौटना पड़ता) सदा के लिए मुक्ति हो जाती है।

समीक्षाः-गीता मुक्तिकाल की कोई अवधि नहीं मानती यह वेद विरुद्ध है। देखो, वेद में लिखा है–

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां, मनामहे चारु देवस्य नाम ।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात्, पितरं च दृशेयं मातरं च ।।

अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां, मनामहे चारु देवस्य नाम ।
स नो मह्या अदितये पुनर्दात्, पितरं च दृशेयं मातरं च ।।
ऋग्वेद १/२४/१,२

(प्रश्न) हम लोग किसका नाम पवित्र जानें ? कौन नाशरहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है? कौन हमको मुक्ति का सुख भुगाकर इस संसार में पुनः जन्म देता और माता-पिता का दर्शन कराता है?

उत्तर— हम परमात्मा का नाम पवित्र जानें। वही नाशरहित पदार्थों के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है। वही हमको मुक्ति में आनन्द भुगाकर इस संसार में पुनः जन्म देता और माता-पिता का दर्शन कराता है।

गीता का मुक्ति से न लौटने का सिद्धान्त विज्ञान के भी विपरीत है, क्योंकि विज्ञान के अनुसार जिसका आदि है उसका अन्त निश्चित है। जबकि गीता मुक्ति काल का आदि तो मानती है परन्तु अन्त नहीं।

नोटः- यदि मोक्ष (मुक्ति) काल की समाप्ति के बाद लौटने की व्यवस्था न हो तो मोक्ष ही जीव के लिए जेल-खाना हो जाय क्योंकि जीवके आनन्द भोगने की भी सीमा होती है। जैसे- कोई व्यक्ति आराम करने या सोने के लिए खाट पर लेट जाये तो एक समय ऐसा भी आता है कि उसकी आराम करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। और उठकर पुनः कर्म करने की इच्छा होती है। यदि उसे खाट पर लेटे रहने को विवश किया जाये तो वही आनन्द जिसके लिए वह तड़प रहा था, बड़ी बेचैनी मालुम होती है। इसीप्रकार मोक्षकाल की समाप्ति पर जीवों को पुर्नजन्म की इच्छा होती है।

प्रश्न (१) जो मुक्ति से जीव फिर आता है तो वह कितने समय तक मुक्ति में रहता है?

उत्तर— ते ब्रह्मलोके ह परान्तकाले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे।

यह मुण्डकोपनिषद् का वचन है। वे मुक्त जीव मुक्ति को प्राप्त होके ब्रह्म में परान्तकाल तक आनन्द को भोगके पुनः महाकल्प के पश्चात् इस संसार में आते हैं।

४३,२०,००० वर्ष की एक चतुर्युगी, २,००० चतुर्युगियों का एक अहोरात्र (ब्रह्म का दिन), ३० अहोरात्र का एक महीना, ऐसे १२ महीनों का एक वर्ष, ऐसे १०० वर्षों का परान्तकाल होता है।

इसको गणित की रीति से यथावत् समझ लीजिए।*

—सत्यार्थ प्रकाश, समु०९

प्रश्न (२) जब ऐसी तो मुक्ति भी जन्म—मरण के सदृश है। इसलिये श्रम करना व्यर्थ है।

उत्तरः- मुक्ति जन्म-मरण के सदृश नहीं, किन्तु जब तक ३६,००० बार उत्पत्ति और प्रलय का जितना समय होता है, उतने समय पर्यन्त जीवों को मुक्ति के आनन्द में रहना, दुःख का न होना क्या छोटी बात है?

जब आज खाते-पीते हो, कल भूख लगने वाली है; पुनः इसका उपाय क्यों करते हो?

जब क्षुधा, तृषा, क्षुद्र धन, राज्य, प्रतिष्ठा, स्त्री, संतान आदि के लिए उपाय करना आवश्यक है तो मुक्ति के लिए क्यों न करना?

जैसे मरना आवश्यक है तो भी जीवन का उपाय किया जाता है, वैसे ही मुक्ति से लौटकर जन्म में आना है तथापि उसका उपाय करना अत्यावश्यक है।

—सत्यार्थ प्रकाश, समु०९

।। शमित्योम् ।।

* देखिए-मेरी लिखी पुस्तक 'दयानन्द की दार्शनिक मान्यताएँ'

नीति के श्लोक

(१) येनास्य पितरो याता, येन याता पितामहः ।
तेन यायात्सतां मार्गं, तेन गच्छान्न रिष्यते ॥

(२) न चौर हार्यं न राज हार्यं, न भ्रातृ भाज्यं न च भारकारि ।
व्यये कृते वर्धति एव नित्यं, विद्या धनं सर्व धनं प्रधानम् ॥

(३) वरमेको गुणी पुत्रो, न च मूर्ख शतान्यपि ।
एकश्चन्द्र तमो हन्ति, न च तारागणाः अपि ॥

(४) विद्वत्वं च नृपत्वं च, न तुल्यं कदाचन् ।
स्वदेशे पूज्यन्ते राजा, विद्वान सर्वत्र पूज्यन्ते ॥

(५) माता शत्रु पिता वैरी, येन बालो न पाठितः ।
न शोभन्ते सभा मध्ये, हंस मध्ये बको यथा ॥

(६) रूप यौवन सम्पन्नाः, विशाल कुल संभवाः ।
विद्याहीनाः न शोभन्ते, निर्गन्धा इव किंशुकाः ॥

(७) सुखार्थिनः कुतो विद्या, कुतो विद्यार्थिनः सुखम् ।
सुखार्थी वा त्यजेत् विद्या, विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम् ॥

(८) पुस्तकस्था यथा विद्या, पर हस्त गतं धनम् ।
कार्य काले च सम्प्राप्ते, न सा विद्या न तद्धनम् ॥

(९) काव्य शास्त्र विनोदेन, कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन च मूर्खाणां, निद्रया कलहेन वा ॥

(१०) विद्या विवादाय धनं मदाय, शक्तिः परेषां परपीडनाय ।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

(११) नारिकेल समाकारा, दृश्यन्ते हि सुहृज्जनाः ।
अन्ये बदरिकाकारा, बहिरेव मनोहराः ॥

(१२) सर्पो क्रूरः खलो क्रूरः, सर्पात् क्रूरतरः खलः ।
सर्पो दशति काले तु, दुर्जनस्तु पदे पदे ॥

(१३) दुर्जनेन समं सख्यं, प्रीति चापि न कारयेत् ।
उष्णो दहति चांगारः, शीतः कृष्णायते करम् ॥

(१४) वृत्तं यत्नेन संरक्षेत्, वित्तमायाति याति च ।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो, वृत्ततस्तु हतो हतः ॥

आर्य समाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्येश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

□□

।। ओ३म् ।।

वैदिक ग्रंथमाला का पुष्प २४

राम और कृष्ण

लेखक

४३ क्रान्तिकारी ग्रंथों के यशस्वी प्रणेता

अखिल भारतीय स० प्र० प्रतियोगिता पुरस्कार विजेता

डा० रामकृष्ण आर्य

सत्यार्थ रत्न, सिद्धान्त शास्त्री, विद्या वाचस्पति

बी० एस-सी०, बी० ए८ एम० एस० (आयुर्वेदाचार्य)

चिकित्सा अधिकारी

अति० प्रा० स्वा० केन्द्र कारोबनकट, जि० भदोही

प्रकाशक

वैदिक पुस्तकालय

ग्रा० माधोरामपुर, पो० परसीपुर, जि० भदोही (उ०प्र०)

☆

दयानन्दाब्द १७१

सृष्टि संवत् १९६०८५३०९६

कार्तिक सं० २०५२ विक्रमी   प्रथम संस्करण : १०००

नवम्बर सन् १९९५ ई०   मूल्य : २ रुपया

दो शब्द

राम और कृष्ण आर्य जाति के दो ऐसे महापुरुष हैं जिनपर हमें बड़ा गर्व है। राम-कृष्ण भारतीय संस्कृति रूपी रथ के दो चक्र हैं। यदि मैं यह कहूँ कि 'राम कृष्ण के विना भारतीय संस्कृति का कोई अस्तित्व नहीं' तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

राम-कृष्ण का जीवन परिचय हमें रामायण और महाभारत से मिलता है। रामायण और महाभारत आर्ष साहित्य के दो ऐतिहासिक महाकाव्य हैं। रामायण की रचना वाल्मीकि ने की और महाभारत की रचना व्यास ने।

यद्यपि रामायण और महाभारत में समय-समय पर भिन्न-भिन्न कवियों ने मिलावटें करके राम-कृष्ण के व्यक्तित्व और कृतित्व को अतिरंजित कर दिया है परन्तु इससे राम-कृष्ण की ऐतिहासिकता को कदापि नकारा नहीं जा सकता।

राम-कृष्ण का इतिहास महान् प्रकाश स्तम्भ हैं। राम-कृष्ण का पवित्र चरित्र करोड़ों वर्षों से हमारा मार्गदर्शन कर रहा है और वेद के सन्मार्ग पर चलते रहने की सतत प्रेरणा दे रहा है। राम-कृष्ण का आदर्श चरित्र निराश, असहाय, निर्बल एवं मृतप्राय व्यक्ति में आशा, उत्साह, बल एवं जीवन का संचार कर देता है।

राम-कृष्ण का चरित्र स्वयं प्रकाश है। मैं उनके चरित्र पर प्रकाश डालूँ तो सूर्य को दीपक दिखाना होगा। यहाँ मेरा प्रयत्न तो इतना ही है कि सबलोग राम-कृष्ण को जानें और मानें। जब सबलोग राम-कृष्ण के पदचिह्नों पर चलेंगे तभी समाज और देश का कल्याण होगा।

आर्य समाज स्थापना दिवस
चैत्र सुदी ५. संवत् २०५० वि०

डा० रामकृष्ण आर्य

राम

इतिहास साक्षी है कि हमारा देश संसार में सबसे महान् था और विद्या, बल एवं वैभव तीनों में संसार का गुरु रहा। परन्तु आज देश की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। चारों ओर अराष्ट्रीय तत्व दिखाई दे रहे हैं। देशद्रोही विघटनकारी शक्तियां हर जगह कार्य कर रही हैं। कहीं राम मुर्दाबाद के नारे लगाये जा रहे हैं, तो कहीं राम की मूर्ति को जूते की माला पहनाया जा रहा है।

अंग्रेजों की कूटनीति चल रही है। मैकाले की शिक्षानीति फल-फूल रही है। हमारे गौरव को कलुषित एवं देश को विघटित करने वाली शिक्षाएँ दी जा रही हैं। सब जगह भ्रष्टाचार व्याप्त है।

देश की दुर्दशा का कारण क्या है? इसका मूल कारण मूर्तिपूजा है। हम राम के चरित्र की पूजा छोड़ राम के चित्र की पूजा करने लगे । पत्थर पूजते-पूजते लोगों की अकल भी पत्थर हो गई। क्योंकि विज्ञान का सिद्धान्त है 'जैसा संग, वैसा रंग'। राम के भक्त शराब पीने लगे, मांस खाने लगे, व्यभिचार करने लगे, जुआ खेलने लगे। राम के भक्त नाम राम का जपने लगे, लेकिन काम राम के विरुद्ध करने लगे। इसीलिए कहावत प्रसिद्ध है- 'मुख में राम, बगल में छुरी।'

आर्य विद्वान् पं० राजवीर शास्त्री ने लिखा है- "राम ने समुद्र को पार करके दंभ के बीज रावण जैसे पराक्रमी योद्धा को भी उसी की जन्मभूमि पर दाँत खट्टे कर दिये और इतना ही नहीं उसके अनुयायियों को भी चुन-चुनकर मारा था। यदि राम के भक्त राम के चरित्र को अपनायें और राम जैसा बनने का प्रयत्न करें तो कोई भी पापी राम के प्रति स्वप्न में भी दुर्भावना न रखे तथा कोई दुष्ट राम भक्तों को ललकारने का दुसाहस न करे।"

(दयानंद संदेश, विशेषांक १९९०)

हमलोग बड़े ही सौभाग्यशाली हैं कि राम जैसे महापुरुष के वंशज और अनुयायी हैं। परन्तु दुःख इस बात का है कि हम राम के चित्र की पूजा करते हैं, राम के चरित्र से कोई शिक्षा नहीं लेते। इसी कारण हम किसी समस्या का समाधान नहीं ढूढ़ पाते और पदे-पदे ठोकरें खाते हैं। इसीलिए आर्य समाज कहता है-

'चित्र की नहीं चरित्र की पूजा करो।'

यदि हम राम के चरित्र की पूजा करें अर्थात् राम के पद-चिह्नों पर चलें तो सभी समस्याओं का समाधान सरलता से हो जाय। यदि हम राम के बताये हुए रास्ते पर चलें तो आपसी द्वेष, गृह कलह, वर्ग संघर्ष,जातिवाद, साम्प्रदायिकता, देश द्रोह आदि सभी बुराइयां नष्ट हो जायें और आत्मीयता, प्रेम, शान्ति और संघटन हो जाय तथा व्यक्ति, परिवार, समाज व देश की उन्नति हो।

राम क्या थे? वाल्मीकि रामायण से पता चलता है कि राम आर्य थे। राम आर्य जाति के महापुरुष थे। राम आदर्श पुरुष थे। राम आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श मित्र, आदर्श शिष्य, आदर्श राजा, आदर्श क्षत्रिय, और आदर्श भक्त थे। राम ने अपने जीवन काल में सदैव मर्यादा का पालन किया। अतः 'मर्यादा पुरुषोत्तम' शब्द राम के नाम के साथ जुड़ गया।

राम का काल

इस विषय में विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश विद्वान राम का जन्म ९ लाख वर्ष पूर्व त्रेतायुग मानते हैं, लेकिन वह त्रेतायुग किस मन्वतर का है इसका स्पष्टीकरण न होने से यह मान्यता अशुद्ध है। देखो! सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता परम हंस महर्षि दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश में जो राम का परिचय दिया है, उससे राम का काल स्पष्ट हो जाता है। स्वामी दयानन्द लिखते हैं—

"परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों महर्षियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये और ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ऋगु, यजुः, साम ओर अथर्व वेद का ग्रहण किया।

(सत्यार्थ प्रकाश, समु० ७)

ब्रह्मा का पुत्र विराट्, विराट् का मनु, मनु के मरीचि आदि १० पुत्र (मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वशिष्ट, भृगु और नारद) हुए। इनके स्वायंभुव आदि ७पुत्र (स्वायंभुव, स्वारोचिस, उत्तम, तामस, रैवत चाक्षुप, वैवस्वत) हुए और उनके संतान इक्ष्वाकु आदि राजा जो आर्यावर्त्त के प्रथम राजा हुए, जिन्होंने यह आर्यावर्त्त बसाया है ।(सत्यार्थ प्रकाश, समु०८)

इक्ष्वाकु यह आर्यावर्त्त का प्रथम राजा हुआ। इक्ष्वाकु की ब्रह्मा से छठी पीढ़ी है।* बहुत सी पीढ़ियों के पश्चात् सगर राजा राज्य करने लगा।

(उपदेश मंजरी, प्र०६)

इसके अनन्तर भरत-कुल में अनेक राजा होते रहे। इसीकारण उस समय से आर्यावर्त का नाम भारतवर्प भी हो गया।

तदनन्तर राजा रघु हुआ। रघु के पीछे राजा राम हुए। इनका रावण से युद्ध हुआ। इनका इतिहास रामायण में वर्णन किया गया है।

(उपदेश मंजरी, प्र० १०)

स्वायंभुव से लेकर राम तक वंशावली वाल्मीकि रामायण में मिलता है—

१. स्वायंभुव	२. इक्ष्वाकु	३. कुक्षि
४. विकुक्षि	५. वाण	६. अनरण्य
७. पृथु	८. त्रिशंकु	९. धुन्धुमार
१०. युवनाश्व	११. मान्धाता	१२. सुसन्धि
१३. ध्रुवसन्धि	१४. भरत	१५. असित
१६. सगर	१७. असमंज	१८. अंशुमान
१९. दिलीप	२०. भगीरथ	२१. ककुत्स्थ
२२. रघु	२३. प्रवृद्ध	२४. शंखन
२५. सुदर्शन	२६. अग्निवर्ण	२७. शीघ्रग
२८. मरु	२९. प्रशुश्रुक	३०. अम्बरीप
३१. नहुप	३२. ययाति	३३. नाभाग
३४. अज	३५. दशरथ	३६. राम

(वा० रामायाण, बालकांड)

इस प्रकार जब हम इतिहास की खोज करते हैं तो पाते हैं कि राम ब्रह्मा की ४० वीं पीढ़ी में हुए थे। यदि १ पीढ़ी = ५० वर्ष तो ४० पीढ़ी = २,००० वर्ष। चूँकि ब्रह्मा सृष्टि की आदि में हुए थे और इस समय सृष्टि संवत् १,९६,०८,५३,०९१ है। इसलिए राम का काल= १,९६,०८,५३, ९१–२,०००=१,९६,०८,५१,०९१ वर्ष प्राचीन सिद्ध होता है।

शंका-समाधान

प्रश्न (१) क्या राम ईश्वर थे?

उत्तर- राम ईश्वर नहीं थें।

प्रमाण

(i) राम अजन्मा नहीं

राम का जन्म हुआ था--

दशरथ पुत्र जन्म सुनि काना। मानहु ब्रह्मानन्द समाना।।

(बालकाण्ड)

(ii) राम सर्वव्यापक नहीं

राम एकदेशीय थे और जब वन गये थे तो अयोध्या नहीं थे। इसीलिए राजा दशरथ का पुत्रशोक में देहान्त हुआ।

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघबर विरह, राउ गयउ सुरधाम।।

(अयोध्या काण्ड)

(iii) राम सर्वज्ञ नहीं

राम अल्पज्ञ थे। उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि सुग्रीव क्यों वन में रहता है? इसीलिए व उससे पूछते हैं।

कारन कवन बसहु वन, मोहि सन कहु सुग्रीव।

(किष्किन्धा काण्ड)

देखो, राम ईश्वर के भक्त थे और सन्ध्या करते थे

पुरजन करि जोहारु घर आये। रघुवर सन्ध्या करन सिधाए।।

(अयोध्याकाण्ड)

प्रश्न (२) क्या राम मांसाहारी थे और मृग का शिकार करते थे?

उत्तर– तुलसीदास ने लिखा है कि राम शिकार करते थे–

सत्य संध प्रभु वधिकरि एही। आनहु चर्म कहत वैदेही।।

(अरण्यकांड)

इसी आधार पर अनेकों धूर्त स्वयं मांस खाते हैं, परन्तु वे भूलें नहीं कि ऐसे लोगों के लिए ही राम ने प्रतिज्ञा की थी-

निसिचर हीन करउँ महि, भुज उठाइ पन कीन्ह। (अरण्य कांड) अतः जो लोग मांस खाते हैं और राम के विपरीत आचरण करते हैं, वे राम के भक्त नहीं शत्रु हैं।

यह कहना कि राम मृग का शिकार करते थे, राम के मर्यादा पर कीचड़ उछालना है। यह रामद्रोह है।

देखिये, राम शाकाहारी थे। राम न तो मांस खाते थे और न मृग का शिकार करते थे। महर्षि वाल्मीकि ने लिखा हैः-

अन्नं उच्चावचं भक्ष्या, फलानि विविधानि च ।

रामाय अभ्याहारार्थं, बहुचोपहृतं मया ।।

निषाद राजगुह ने भरत से कहा-"मैंने राम के भोजन हेतु विभिन्न प्रकार के अन्न और फल भेंट किया था।"

आर्यपुत्राभिरामो सो, मृगो हरति मे मनः ।

आनयेनं महाबाहो, क्रीडार्थो नो भविष्यति ।।

सीता ने कहा "हे आर्यपुत्र राम! इस मृग को पकड़ लाओ। इसने मेरे मन को हरण किया है। मैं इससे खेला करूँगी।"

प्रश्न (३) क्या राम ने शम्बूक वध किया था?

उत्तरः- वाल्मीकि रामायण उत्तर कांड के अनुसार ब्राह्मण बालक की मृत्यु हो जाने पर उसके पारिवारिक जन राम के दरबार में रोते हुए पहुँचे। नारद मुनि ने बताया कि शम्बूक नामक शूद्र दक्षिण दिशा में पर्वत पर तपस्या कर रहा है जिसके कारण ब्राह्मण बालक की मृत्यु हुई। राम विमान में बैठकर वहाँ गये और उस शूद्र को मारकर ब्राह्मण बालक को जीवित किये।

यह कथा ही नहीं सम्पूर्ण उत्तर कांड प्रक्षिप्त है। क्योंकि महर्षि वाल्मीकि ने लिखा है-

चतुर्विंशति सहस्राणि, श्लोकानामुक्तवान ऋषि ।
तथा सर्ग शतानि पंच, षड् कांडानि चोत्तमम् ।।

अर्थात् ६ कांड (१. बाल कांड, २.अयोध्या कांड, ३. सुन्दर कांड, ४.अरण्य कांड, ५. किष्किंधा कांड और ६. लंका कांड) में यह रामायण लिखा गया है।

शंबूक-वध की कथा सत्य मानने वालों से मैं पूछता हूँ–

(१) ब्राह्मण बालक की मृत्यु और शूद्र की तपस्या से क्या संबंध है?

(२) क्या दूसरे को मारने से अन्य मृत व्यक्ति जीवित हो सकता है?

(३) राम के राज्य में सभी वेद मार्ग पर चलने वाले थे। तुलसीदास ने लिखा है 'निरत वेद पथ लोग।' तो शूद्र की तपस्या पर प्रतिबंध क्यों?

(४) राम आर्य थे। महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं 'आर्यः सर्व समश्चैव। अर्थात् सबके साथ समान व्यवहार करने वाले को आर्य कहते हैं। अतः राम शंबूक के साथ ऐसा व्यौहार क्यों करते हैं?

●●

कृष्ण

५ हजार वर्षों से पूर्व द्वापर के अन्तिम चरण और कलियुग के प्रथम चरण का संक्रमण काल। भारत का भाग्याकाश अज्ञान और अन्याय की काली घटाओं से घिरा है। महान् भारत छोटे-छोटे राज्यों में बटा है। मथुरा का कंस अपने पिता उग्रसेन को ही जेल में डालकर स्वयं राजा बना हुआ है। मगध का राजा जरासंध तो भारत का सम्राट बनने का स्वप्न देख रहा है। वह ८६ राजाओं को कैदकर उनके राज्यों को हड़प चुका है। चेदि देश का राजा शिशुपाल और हस्तिनापुर के कौरव बिलासिता में डूबे हुए हैं। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाला न्याय है। खाओ, पियो और मौज करो (Eat, drink and be merry) की नीति चल रही है। देश नेतृत्व विहीन है। एक ऐसा नेता की युग बाट जोह रहा है जो खंड-खंड भारत को जोड़कर महाभारत बना सके।

ईशकृपा से कृष्ण का जन्म हुआ। श्रीकृष्ण का जन्म जेल के अन्दर हुआ। कृष्ण जी वसुदेव और देवकी की ८ वीं सन्तान थे। क्रूर कंस के अत्याचार से सारी जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी। कंस अपनी बहन देवकी की हर सन्तान को पैदा होते ही मार देता था। इस बार हर कीमत पर बच्चे की रक्षा की गुप्त योजना बनाई गई। बालक कृष्ण का जन्म होता है। वसुदेव बालक को ले एक टोकरी में रखकर अपने मित्र नन्द गोप के यहाँ चल देते हैं। वसुदेव जेल के फाटक पार किये। प्रहरी कुछ बोले नहीं। उन्होंनें उस ओर से आँखें बन्द कर लिये, मानो सो गये हों।

वसुदेव नन्द के यहाँ पहुँचकर नन्द की पत्नी यशोदा की सद्योजात कन्या को लाकर देवकी के पास सुला देते हैं। क्रूर कंस इस कन्या को देवकी की ८ वीं सन्तान समझकर मार देता है। जबकि वह तो नन्द के घर पहुँच चुका था।

नन्द के घर कृष्ण का पालन-पोषण होता रहा। कृष्ण गुरुकुल में संदीपन के यहाँ विद्याध्ययन किये। स्नातक बन कर जब कृष्ण मथुरा आये। उस समय यादवों में परस्पर फूट था और जरासंध का समर्थन मिलने से मथुरा में कंस

का राज्य था। कृष्ण ने क्रूर कंस को नष्ट करने का बीड़ा उठाया। इसके लिए उसने आहुक और अक्रूर नामक यादवों के दोनों दलों को एक किया।

कंस के अंग रक्षक (Body guards) २ पहलवान थे- चाणूर और मुष्टिक। एक बार मल्लयुद्ध प्रतियोगिता कंस की अध्यक्षता में हुई। चाणूर और मुष्टिक से कुश्ती सरल नहीं था लेकिन कृष्ण और बलिराम अखाड़े में जा पहुँचे और दोनों ने उन्हें पराजित ही नहीं किया अपितु उन्हें निष्प्राण भी कर दिया। कंस को यह कैसे सहन होता? उसने कृष्ण को पकड़ना चाहा तो कृष्ण ने मौका पाकर उसे भी यमलोक पहुँचा दिया। यह कृष्ण की राजनैतिक ढंग की पहली विजय थी।

कंस की मृत्यु का समाचार सुनकर जरासंध कैसे चुप रह सकता था? वह कंस का श्वसुर था और उसकी २ पुत्रियाँ (अस्ति व प्राप्ति) कंस को विवाही थीं। अपनी पुत्रियों के वैधव्य और यादव संघ की पुनः स्थापना से दुःखी जरासंध विक्षिप्त सर्प की भाँति छटपटाने लगा और बदला लेने को उद्यत हो गया।

इसी बीच जरासंध के अंगरक्षक २ पहलवान- हंस और डिम्भक यमुना में कूदकर मर गये। घटना यों हुई। हंस नामक एक राजा को बलिराम ने मार दिया। उस नाम साम्य से अपने साथी को मरा समझकर डिम्भक यमुना में कूदकर मर गया। डिम्भक की मृत्यु का समाचार सुनकर हंस ने भी यमुना में कूदकर आत्महत्या कर लिया।

जरासंध १७ बार यादव संघ से हार चुका था। हंस और डिम्भक की मृत्यु से उसकी हिम्मत और टूट गयी। परन्तु कालयवन (विदेशी राजा) के उकसाने पर पुनः १८ वीं बार आक्रमण किया। कृष्ण के नेतृत्व में इस बार यादवों ने उन्हें खूब छकाया और कालयवन मारा भी गया। लेकिन रोज की चिन्ता से मुक्त होने का उपाय कृष्ण ने यह सोचा कि 'क्रूर से दूर भला।' और सभी यादव मथुरा छोड़के द्वारिका चले गये।

बाद में कृष्णजी भीम और अर्जुन को साथ लेकर ब्राह्मण वेश में जरासंध के यहाँ पहुचें और मल्लयुद्ध करके भीम से जरासंध को मरवा दिया तथा उसके द्वारा कैद ८६ राजाओं को छुड़वा दिया। यह कृष्णकी राजनैतिक ढंग
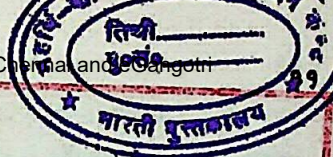
की दूसरी विजय थी।

चारों ओर कृष्ण का यश फैल गया। परन्तु यह शिशुपाल को अच्छा न लगा। रुक्मिणी का स्वयंवर यह विरोध और बढ़ा दिया। रुक्मिणी का स्वयंवर था। वह कृष्ण को चाहती थी लेकिन उसका पिता भिष्मक उसका विवाह शिशुपाल से करना चाहता था। कृष्ण स्वयंवर में गये और उपस्थित राजाओं के समक्ष अपने तेज और शौर्य का प्रदर्शन कर रुक्मिणी को उठा लाये।

महाराजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में जब भीष्म पितामह ने उस समय के सर्वश्रेष्ठ पुरुष (बुद्धि और बल में) के रूप में सम्मानित करने के लिए कृष्ण का नाम प्रस्तुत किया तो शिशुपाल को बहुत बुरा लगा। वह जल भुन गया और कृष्ण को गालियां देने लगा। कृष्ण उसकी गालियां सुनकर भी शान्त रहे, कुछ नहीं बोले, किन्तु जब उसने युद्ध के लिए ललकारा तो चुप न रह सके। कृष्ण ने तत्काल शिशुपाल का सिर सुदर्शन चक्र से कतर दिया। यह कृष्ण की राजनैतिक ढंग की तीसरी विजय थी।

विशेषताएँ

(१) मानवताः- महर्षि दयानंद ने लिखा है-"मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होके स्व-आत्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और लाभ-हानि को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे लेकिन न्यायकारी निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों उनकी सुख-उन्नति-प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ, महाबलवान्, और गुणवान् हों तो भी उनका नाश-अवनति-अप्रियाचरण सदा किया करें।" —सत्यार्थ प्रकाश

कृष्ण महामानव थे क्योंकि वे निर्बल किन्तु धर्मात्मा पांडवों का साथ देते हैं और सबल किन्तु पापात्मा कौरवों का विरोध करते हैं।

(२) ईश-भक्तिः- भगवान् कृष्ण नित्य संध्या करते थे। वे हस्तिनापुर जाते हुए रास्ते में शाम हो गई तो वहीं रथ रोक दिये और संध्या किये। प्रमाण-

अवतीर्य रथात् तूर्णं, कृत्वा शौचं यथाविधि ।
रथमोचं आदिश्य, सन्ध्यां उपविवेश ह ।।

(३) **निर्भीकता:-** कृष्ण निर्भीक और स्वाभिमानी थे। दुर्योधन के भोज प्रस्ताव पर कृष्ण कहते हैं-

सम्प्रीति भोज्यानि अन्नानि, आपद् भोज्यानि वा पुनः ।
न च सम्प्रीयसे राजन्, न चैव आपद्गता वयम् ।। महाभारत

अर्थात् हे राजन्- अन्न २ कारणों से खाया जाता है- प्रेम के कारण या आपत्ति पड़ने पर। प्रीति तुममें नहीं है और संकट में हम नहीं हैं।

(४) **निर्लोभता:-** कृष्ण निर्लोभी थे। लोभ उनको छू भी न सका था। कृष्ण ने कंस को मारा परन्तु राजा नहीं बने अपितु कंस के पिता उग्रसेन को ही गद्दी पर बैठाया। इसी प्रकार जरासंघ को मारने पर उसके पुत्र सहदेव को ही राजा बनाया।

(५) **नम्रता:-** युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में कृष्ण ने ब्राह्मणों (विद्वानों) की पूजा और उनके चरण धोने का कार्य अपने ऊपर लिया। यह उनकी नम्रता का उत्कृष्ट उदाहरण है।

(६) **क्षात्र धर्म:-** महर्षि दयानंद क्षात्रधर्म का वर्णन करते हुए लिखते हैं- "इस प्रकार से लड़ना कि जिससे निश्चित विजय होवे व आप बचे, जो भागने से वा शत्रुओं को धोखा देने से हो तो ऐसा ही करना।"

-सत्यार्थ प्रकाश, समु०४

कृष्ण का जीवन उपरोक्त का अक्षरशः साक्षी है। कृष्ण सच्चे क्षत्रिय थे।

(७) **नीति कुशलता:-**

छीनता हो स्वत्व कोई और तू त्याग तप में लीन है, यह पाप है।
पुण्य है उच्छिन्न कर देना उसे, बढ़ रहा तेरी तरफ जो हाथ है।।
व्यर्थ किसी को छेड़ो नहीं। पर आतताई को छोड़ो नहीं।।

शठे शाठ्यं समाचरेत्। Tit for tat.

महर्षि दयानंद के शब्दों में 'यथायोग्य' कृष्ण की नीति थी। महाभारत युद्ध में जब कर्ण के रथ का पहिया जमीन में धँस गया तो उसने क्षात्र-धर्म की दुहाई दी और कहा- "निहत्थे पर वार करना धर्म नहीं, अभी रुके रहो।" तब कृष्ण ने उत्तर दिया-

यद् द्रोपदीमेकवस्त्रां सभाया मानाययेस्त्वं न सुयोधनश्च।
दुःशासनः शकुनि सौवलश्च न ते कर्ण प्रत्यक्मततत्र धर्मः॥
यद् अभिमन्युः बहवः युद्धे जघ्नुमहारथाः।
पारवाय रण वाल क्वते धर्मस्तदा गतः॥ महाभारत

"ऐ कर्ण! जिस समय तुम, दुःशासन, शकुनि और सौवल मिलकर ऋतुमती एकवस्त्रा द्रोपदी को सभा में घसीट लाये थे, उस समय तुम्हें धर्म की याद क्यों नहीं आयी? और जब तुम बहुत से महारथियों ने मिलकर अकेले निहत्थे अभिमन्यु को घेरकर मार डाला था, उस समय तुम्हारा क्षात्र-धर्म कहाँ गया था?

इतना कहकर कृष्ण ने अर्जुन को आदेश दिया कि इस प्रकार दल दल में फँसे हुए कर्ण का वध करना पुण्य है।

शंका-समाधान

प्रश्न (१) क्या कृष्ण बचपन में चोर थे- दूध, दही, मक्खन चुराकर खाया करते थे? और युवास्था में व्यभिचारी थे- गोपियों के साथ रासलीला करते थे?

उत्तरः- कृष्ण एक आदर्श महापुरुष थे। उनके उत्कृष्ट व्यक्तित्व को इस हीनतम दशा में पहुँचाने का सारा उत्तरदायित्व पुराणों का है। महर्षि दयानंद ने कृष्ण के विषय में लिखा है-

"देखो! श्रीकृष्णजी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्णजी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, पराई स्त्रियों से

रासमंडल, क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण जी में लगाये हैं। इसको पढ़-पढ़ा, सुन-सुनाके अन्य मतवाले श्रीकृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्रीकृष्णजी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती?"

-सत्यार्थ प्रकाश, समु०११

प्रश्न (२) क्या कृष्ण युद्ध-लिप्सु थे? उन्होंने महाभारत कराया?

उत्तर- कृष्ण शान्तिप्रिय थे, युद्धलिप्सु नहीं। जब महाभारत युद्ध के बादल मड़राने लगते हैं तो कृष्ण युद्ध रोकने के लिए पूर्ण प्रयत्न करते हैं और पांडवों की ओर से सन्धि-प्रस्ताव लेकर हस्तिनापुर जाते हैं।

रात को भोजन के बाद महात्मा विदुर ने कृष्ण से कहा-"हे कृष्ण! मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारे उपदेश से कुछ लाभ नहीं होगा। जिस प्रकार चांडालों के सामने ब्राह्मणों (विद्वानों) के वचन का सत्कार नहीं होता, उसी प्रकार दुर्योधन की सभा में तुम्हारे कथन का सम्मान नहीं होगा। ऐसे व्यर्थ काम से दूर रहना ही अच्छा है।"

कृष्ण ने उत्तर दिया-"दुर्योधन की दुष्टता का ज्ञान मुझे है परन्तु सारी पृथ्वी पर रुधिर की नदियां बहते नहीं देखा जाता। मैं दुर्योधन को समझाऊँगा।"

कृष्ण ने धृतराष्ट्र से कहा- "हे राजन्! आपका कुल सम्पूर्ण आर्यावर्त में शिरोमणि है। ऐसे कुल से कभी किसी निन्दनीय कार्य की आशा नहीं की जा सकती। इसलिए यही उचित है कि पांडवों और कौरवों में सन्धि हो जाय। यदि लड़ाई छिड़ गयी तो हत्या का भार आपके सिर पर होगा। यदि पांडव मारे गये तब भी आपको दुःख होगा और यदि कौरव मारे गये तो आपका जीवन ही वृथा हो जायेगा। इस लड़ाई में सबकी बरबादी है। इसलिए सन्त पर दया करो और लड़ाई बन्द करो। नहीं तो खून की नदियां बहेंगी और सारा देश उसमें डूब जायेगा।"

धृतराष्ट्र ने कहा-"केशव! तुमने जो कुछ कहा है, सत्य है परन्तु मेरा वश नहीं। दुर्योधन मेरी आज्ञानुसार नहीं चलता है और न ही अपनी माता गांधारी की बात मानता है। उस पर किसी के उपदेश का प्रभाव नहीं पड़ता।

इसलिए हे कृष्ण तुम्हीं कृपा करके उसे समझाओ।"

कृष्ण ने दुर्योधन को समझाते हुए कहा-" भाई! जब एक महान् कुल में पैदा हुए हो फिर आचरण क्यों कुलहीनों जैसा करते हो? अपने भाइयों से व्यर्थ का वैर और परायों के सहारे इतना गर्व? अच्छा युद्ध हो गया तो उसका परिणाम क्या होगा? कुल का नाश। तुम्हें सभी कुलघ्नी कहेंगे। इसलिए सन्धि कर लो।"

दुर्योधन ने उत्तर दिया-"मैं पांडवों को सुई की नोक भर भूमि नहीं दूँगा।" इस पर कृष्ण ने क्रुद्ध होकर कहा-"हे दुर्योधन! क्या सचमुच तू बाणों की शैय्या पर सोना चाहते हो? अच्छा तेरी इच्छा पूर्ण हो। सत्य है, जब बुरे दिन आते हैं तो बुद्धि विपरीत हो जाती है। विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।"

अन्त में कृष्ण ने धृतराष्ट्र को सलाह दिया-"हे राजन्। आप दुर्योधन को बाँधकर पांडवों से संधि कर लो। ऐसा न हो कि आपके कारण सारे क्षत्रियों का विनाश हो जाय।"

प्रश्न (३) क्या कृष्ण ईश्वर थे? उन्होंने बड़े-बड़े दुष्टों को मारा, पहाड़ उठाया, चीर बढ़ाया, विराट रूप दिखाया।

उत्तरः- कृष्ण ईश्वर नहीं थे। क्योंकि—

(१) ईश्वर निराकर, सर्वव्यापक और जन्म-मृत्यु से परे है। जबकि कृष्ण साकार, एकदेशीय और जन्म-मृत्यु से बँधे थे।

(२) कृष्ण ईश्वर के भक्त थे तथा सन्ध्या करते थे। (देखिये, पृ० ११) सन्धि से सन्ध्या बना है। सन्धि = मेल। अतः सन्ध्या का अर्थ हुआ आत्मा और परमात्मा का मिलन। मैं पूछता हूँ यदि कृष्ण ईश्वर होते तो संध्या क्यों करते? और किसकी संध्या करते?

कृष्ण महान् योद्धा थे। उन्होंने बड़े-बड़े दुष्टों को मारा। लोगों ने कृष्ण को ईश्वर बनाने के लिए अनेकों चमत्कार पूर्ण बातें गढ़कर उनके जीवन से जोड़ दिये हैं। लेकिन इससे कृष्ण ईश्वर नहीं सिद्ध होते हैं।

।। शमित्योम् ।।
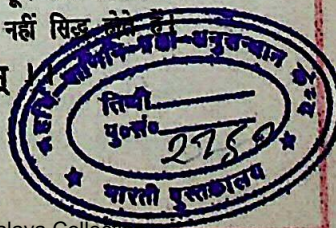
हम आर्य वीर हैं

(गीत)

हम आर्य वीर हैं, सारे जग को आर्य बनायेंगे ।
वेदों का सन्देश, विश्व भर में फैलायेंगे ।।टेक।।

दिन दूना औ' रात चौगुना, बढ़ता भ्रष्टाचार यहाँ ।
रक्षक ही भक्षक बने हुए, मरता बेमौत इनसान यहाँ ।।
देश के नेता पहन के चोंगा, करते रोज घोटाला ।
त्राहि त्राहि करती है जनता कोई न सुनने वाला ।।
सत्य न्याय की बात बताकर, सबका कष्ट मिटायेंगे ।
हम आर्य वीर हैं .... ।।१।।

होत न आज्ञा बिन पैसा रे, चाहे कहीं भी जायें ।
घूस लेते सारे वेइमान, सुविधा शुल्क बतायें ।।
बढ़ गई इतनी घूसखोरी, कि घूस भगवान को देते ।
और काम यदि बन जाये तो बाकी फिर दे देते ।।
सारे घूस लेने वालों को, घूसा हम दिलायेंगे ।
हम आर्य वीर हैं.......................... ।।२।।

मत, पंथ, सम्प्रदाय, देश के कोढ़ हैं सारे ।
धूर्त-ढोंगी-पाखण्डी, कान खोल सुनें मतवाले ।।
सारे कुपंथ को छोड़ें, और वेद धर्म अपनायें ।
अब किसी को न भटकायें, वर्ना अपनी खैर मनायें ।।
सारे मत और पंथों में हम आग लगायेंगे ।
हम आर्य वीर हैं.......................... ।।३।।

अब तो घर-घर बजेगा, प्यारे आर्यसमाज का डंका ।
सारा भ्रष्टाचार मिटेगा, पाप की जलेगी लंका ।।
'जय ऋषी की' बोलेंगे सब, जय ऋषी की ।
जय ऋषी की, जय ऋषी की, जय ऋषी की ।।
'रामकृष्ण आर्य' ओ३म् का झंडा हम लहरायेंगे ।
हम आर्य वीर हैं.......................... ।।४।।

□□

आर्य समाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्येश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

वैदिक पुस्तकालय माधोरामपुर (भदोही) के

नियम और उद्देश्य

१. इस पुस्तकालय का उद्देश्य धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं ऐतिहासिक पुस्तकें प्रकाशित करके जन-जन तक पहुँचाना है अर्थात् अंधविश्वास, पाखण्ड, और कुरीतियों को दूर करके देश एवं समाज की सेवा करना !

२. पुस्तकों के मूल्य में छूट निम्नप्रकार हैं-

१ से २४ प्रतियों पर १०% छूट
२५ से ४९ प्रतियों पर २०% छूट
५० से ९९ प्रतियों पर ३०% छूट
१०० से १९९ प्रतियों पर ४०% छूट
२०० से अधिक प्रतियों पर ५०% छूट

नोट- १०० रुपये से कम की पुस्तकें होने पर कोई छूट नहीं ।

३. पुस्तकें मँगाने वाले अपना पूरा नाम और पता साफ-साफ लिखें । निकटतम रे. स्टेशन का नाम भी लिखें ।

४. ग्राहक पुस्तकों की कुल कीमत का २५% धनराशि अग्रिम आर्डर के साथ भेजें ।

५. डाक खर्च ग्राहक को देना होगा ।

६. कागज, छपाई आदि की दरें बढ़ने पर पुस्तकों के मूल्य संशोधित कर दिये जायेंगे ।

प्रकाशक
वैदिक पुस्तकालय
ग्रा. माधोरामपुर, पो. परसीपुर
जि. भदोही (उ.प्र.)

खुश खबरी! ४० रुपये में ४० पुस्तकें !! अरे वाह!!!

डा० रामकृष्ण आर्य द्वारा लिखित क्रान्तिकारी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
एक ही रास्ता 'वैदिक धर्म'	२.००	वेद : क्या? क्यों? कैसे?	२.००
वेद और दयानन्द	१.००	वैदिक मुक्ति चालीसा	०.५०
गायत्री मंत्र : व्याख्या	२.००	ईश्वर : क्या? क्यों? कैसे?	१.००
ईश्वर अवतार नहीं लेता	०.५०	ईश्वरभक्ति बनाम मूर्तिपूजा	१.००
मूर्तिपूजा : क्या? क्यों? कैसे?	२.००	मूर्तिपूजा से हानियाँ	०.५०
मूर्तिपूजा : नरकधाम का महापथ	०.५०	मूर्तिपूजा का अन्त	१.००
फलितज्योतिष अंधविश्वास है	१.००	पितृयज्ञ बनाम मृतकश्राद्ध	१.००
अमर शहीद	१.००	स्वामी दयानन्द सरस्वती	३.००
दयानन्द की देन	३.००	दयानन्द की दार्शनिक मान्यताएँ	२.००
क्रांति के अग्रदूत : महर्षि दयानन्द	१.००	सत्य के योद्धा : स्वामी दयानन्द	१.००
सत्यार्थ प्रकाश दर्पण	२.००	ढोल की पोल	५.००
गीता सत्य की कसौटी पर	४.००	राम और कृष्ण	२.००
मानवता का मसीहा : देव दयानन्द	०.५०	आर्यसमाज से मिलकर [illegible]	[illegible]
आर्यसमाज और राजनीति	१.००	गीता का चक्रव्यूह	१.००
द्रौपदी के ५ पति नहीं थे	१.००	मांस खाने से हानियाँ	[illegible]
मृतक श्राद्ध पाखंड है	१.००	शंका-समाधान	२.००
पुराणों का पोलखाता	३.००	बौद्धमत या बुद्धमत	[illegible]
ईसाई मत का खण्डन	०.५०	इस्लाम मत की समीक्षा	१.००
आर्यसमाज का चैलेञ्ज	१.००	पुराण शास्त्रार्थ के आइने में	१.००
असत्य पर सत्य की विजय	१.००	दयानन्द दिग्विजय	३.००
वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-१)	१६.००	वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-२)	१६.००
वैदिक ग्रन्थमाला (भाग-३)	१६.००	वैदिक ग्रन्थमाला (सम्पूर्ण)	४०.००

गीतों की पुस्तकें—

पुस्तक	मूल्य	पुस्तक	मूल्य
वैदिक गीतमाला	१६.००	वैदिक गीतांजलि	१६.००
वैदिक गीत चालीसा	६.००		

प्रकाशक- वैदिक पुस्तकालय, ग्रा० माधोरामपुर, पो० भदोहीपुर, जि०-भदोही

भाई-बहनों

(गीत)

भाई वहनों! बचके रहना, धुरतन से।
देखो, बैठै हैं सियार सारे बनठन के।।

धूर्तों का जाल हर जगह बिछा है, कहाँ तक बतायें।
जहाँ देखो वहाँ, भोली जनता को धूर्त फँसाये।।
भोली जनता का माल, धूर्त्त लूटकर खाते हैं।
जनता भूखो मरती है, धूर्त्त सारे मौज उड़ाते हैं।।

भाई-बहनों! बचके रहना धुरतन से।
देखो, बैठे हैं सियार सारे बनठन के।।

फँसे हैं जो धूर्तों के जाल में, उनको जल्द छुड़ाओ।
समझाने से जो न समझे तो, तुम मुझको बुलाओ।।
डा. रामकृष्ण माधोरामपुर, परसीपुर डाकखाना।
जिला भदोही मेरा पता है, इसे भूल मत जाना।।

भाई-बहनों! बचके रहना धुरतन से।
देखो, बैठे हैं सियार सारे बनठन के।।

मैं आकर के उन लोगों को, मिनटों में समझाऊँगा।
उनकी आँखें खुल जायेंगी, ऐसी सुई लगाऊँगा।।
तब धूर्तों के चेले भी, धूर्तों की पोल खोलेंगे।
और हम सभी मिलकरके, 'जय ऋषी की' बोलेंगे।।
जय ऋषी की, जय ऋषी की।
जय ऋषी की, जय ऋषी की।।

भाई-बहनों! बचके रहना धुरतन से।
देखो, बैठे हैं सियार सारे बनठन के।।